Chapter-2

द्वितीय अध्याय

आधुनिक युग में वीर काव्यों की आधार भूमि

काव्य और परिवेश का संबंध :-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जिसप्रकार उसके जीवन का एक व्यष्टि रूप है, उसी प्रकार समष्टि रूप भी है, इस सामाजिक आवेष्टन के मध्य ही उसके व्यक्तित्व का विकास होता है, उसका व्यक्ति पुरूष अपनी सत्ता को चरितार्थ करना चाहता है, किन्तु पग- पग पर समाज का अस्तित्व मानकर ही उसे चलना पड़ता है, वह जानता है कि उसके जीवन की गति विधियाँ समाज के सहस्त्रों विधि निषेधों द्वारा सीमाबद्ध हैं, यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में वह अपने समस्त कार्यों में स्वतंत्र दृष्टिगोचर होता है, किन्तु समाज की परिस्थिति एवं उसकी भावधारा के साथ उसका योगसूत्र कभी विच्छिन्न नहीं हो पाता, साहित्य के जीवन के सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, आशा-आकांक्षा, स्वप्न-कल्पना, उत्थान-पतन अर्थात् उसके सम्पूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति ही साहित्य द्वारा होती है, समाज में समय- समय पर जो परिवर्तन होते रहते हैं उनका प्रभाव भी मानव मन पर पड़े बिना नहीं रहता, मनुष्य के मन का यह परिवर्तन जब साहित्य में प्रतिफलित होता है, तब साहित्य में चैतन्य की सृष्टि होती है और वह सबके लिए उपभोग्य बन जाता है,

साहित्य युग का प्रतिबिम्ब होता है, युग व्यापी विचारधाराएँ एवं तत्प्रेरित क्रियाएँ निश्चय ही साहित्य को प्रभावित करती हैं, किसी भी देश या काल का साहित्य उस देश या काल की परिस्थितियों से विच्छन्न करके नहीं देखा जा सकता, साहित्यकार की नवनवोन्मेष शालिनी प्रतिभा एवं कल्पना स्थूल तथ्यों को एक नवसृष्टि के रूप में संयोजित कर देती है, साहित्य के उपकरण मूलतः यथार्थ जगत् से ही गृहीत होते हैं किन्तु रचनाकार के हाथों नवीन रंग रूप एवं सौन्दर्य भंगिमा पा जाते हैं, काव्य में इस प्रक्रिया का रूप और भी जटिल होता है, भावों की अधिकता, संवेदन की तीव्रता तथा शब्द विन्यास के वैशिष्ट्य से, साहित्य के अन्य रूपों की अपेक्षा, काव्य पर युग का प्रभाव अधिक कठिनाई से लक्षित हो पाता है, किन्तु काव्य चाहे कितना भी व्यष्टिमूलक , एकान्तनिष्ठ हो, उसपर युग के प्रभाव का निषेध संभव नहीं,

प्रत्येक युग में यदि मनुष्य के विचारों में परिवर्तन न होते तो साहित्य की प्राण रस धारा में सरसता न आ पाती और शनैः शनैः वह शुष्क हो जाती है. विचारों, मान्यताओं और आकांक्षाओं में परिवर्तन मनुष्य के सामने नयी-नयी समस्यायें लेकर उपस्थित होता है और मानव उन्हें साहित्य में स्थापित करता है. यही कारण है कि प्रत्येक युग की विचारधारा की छाप उस युग के साहित्य पर पड़ती है. हिन्दी साहित्य के इतिहास के पृष्ठों के अवलोकन से यह बात स्पष्ट हो जाती है. साहित्य का वैयक्तिक और राष्ट्रीय जीवन से भी घनिष्ठ संबंध है. साहित्यकार या कवि के जीवन एवं चिन्तन पर समसामयिक परिस्थितियाँ निरन्तर अपना प्रभाव डालती रहती हैं. रचनाकार यदि उनसे बचने का प्रयत्न करें तो भी नहीं बच सकता क्योंकि जगत् में जो घटनायें घटित हो रही हैं साहित्यकार पर उनकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक और अनिवार्य है.

साहित्यकार सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक सहृदय एवं संवेदनशील होता है. व्यष्टि एवं समष्टि के सुख-दुःख की सबसे गहन और व्यापक प्रतिक्रिया उसी में ही होती है. इसलिए साहित्यकार का स्वाभाविक धर्म है कि वह अपने देश और काल की वास्तविक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण करे. यदि किसी देश में चारों ओर महा मारी का तांडव नृत्य हो रहा हो, लाखों करोडों आदमी भूख से मर रहे हों, देश के जन-जन को पग-पग पर विदेशी दासता की ठोकरें मिल रहीं हो, देश दुःखी हो, भूख, दासता और शोषण का शिकार हो और ऐसी दशा में साहित्यकार इन सब की उपेक्षा करके प्रेम का राग आलपता है तो वह राष्ट्रीय जीवन की प्रमुखधारा से कोसों दूर है, वह राष्ट्र के प्रति ही नहीं साहित्य के प्रति भी विश्वासघात करता है . वह वास्तविक अर्थ में साहित्यकार कहलाने का अधिकारी ही नहीं है. साहित्यकार यदि सच्चा, निष्ठावान होगा तो उसकी रचना पर जागतिक परिस्थितियों की छाया अवश्य पड़ेगी. समकालीन परिस्थितियों का चित्रण करते हुए भी साहित्यकार मात्र फोटोग्राफर नहीं है.

क्योंकि यदि वह मात्र फोटोग्राफर बनने का प्रयास करेगा तो वह साहित्य के नाम पर एक निर्जीव वस्तु ही प्रस्तुत कर सकेगा उसका साहित्य साहित्य नहीं हो सकता. साहित्यकार के साहित्य सृजन में उसके उसके चर्म चक्षु ही नहीं उसकी दिव्य दृष्टि, अन्तःचेतना और नूतन कल्पना भी कार्य करती है.

काव्य समाज की वस्तु है और उसका कर्ता कवि संवेदनशील प्राणी है. समाज के बीच संचारित होने वाली भावधाराओं एवं विचार तरंगों के आघात से उसकी हृदय तंत्री जब कंपित हो उठती है तब काव्य से झंकार उत्पन्न होती है. काव्य सामाजिक जीवन के दृश्यों एवं मनोवृत्तियों का प्रतिबिम्ब होता है. डा० शिवनन्दन प्रसाद के शब्दों में - " साहित्य विश्वमानव की चेतना का स्पन्दन है, विश्व हृदय के राग-विरागों की बांसुरी है. यह वह दर्पण है जिसमें विश्व जीवन युग की छाप के लिए प्रतिबिम्बित होता रहता है और वह ध्रुव की आलोक रश्मि भी जिसमें संकेत पर युग युग का पथिक मानव अपनी अथक जीवन यात्रा की दिशा निर्णीत करता है. साहित्य जहाँ एक ओर मानवता की अतीत अनुभूतियों का अक्षर कोष है, वहाँ दूसरी ओर वर्तमान का संबल और भविष्य की प्रेरणा भी. पर इन सभी बातोंकी तह में एक अनिवार्य तथ्य है और वह यह है कि साहित्य अखिल मानवता की सम्पत्ति, मानव मात्र की विभूति है. " [1] कवि या लेखक की मुक्त दृष्टि उस काल की ठोस परिस्थितियों के चक्र में से होकर ही ऊपर उठती है. " साहित्य समाज का दर्पण है " इस उक्ति को चरितार्थ करते हुए कवि अपने युग की भावनाओं, विचारों एवं आदर्शों को जनता के सम्मुख रखता है. मूलतः कवि भावुक होता है, उसका हृदय पक्ष प्रबल हो उठता है, जब कवि विचारक की कोटि में पहुँच जाता है, तब वह सौन्दर्य के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रहता, अपितु युग के सामान्य धारातल पर उतर आता है. तब वह विभिन्न प्रकार की युगीन वस्तुओं एवं क्रियाओं का सम्यक् निरीक्षण करता है. स्वभावतः आदर्श प्रेमी होने के कारण कवि प्रगति के मार्ग में समाज का निर्माण करना चाहता है. ऐसा कवि परिवर्तन प्रेमी और प्रायः क्रान्तिकारी होता है. कवि

दिनकर ने " शुद्ध कविता की खोज " में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए हैं --

" मनीषी तलवार से नहीं कलमसे लड़ते हैं और समाज में ऐसा भूकंप ला सकते हैं, जैसा भूकंप सेनाएँ भी नहीं ला सकतीं. सात्विक क्रोध मनीषी की जान है. जिसमें यह क्रोध नहीं होता, उस मनीषी की वाणी विफल हो जाती है. नवीन युग की सभी क्रांतियाँ पहले मनीषियों के दिमाग में सुलगी थीं, पीछे उनकी लपेट में जनता भी आ गई. स्थापित समाज के विरुद्ध अगर मिनीषियों के मन में असंतोष नहीं है, तो वह समाज नहीं टूटेगा. लेकिन , मनीषी अगर उसके विरुद्ध हैं तो समाज को आज नहीं तो कल बदलना पड़ेगा. मनीषी वह सरल, निश्छल यंत्र है, जिसके भीतर जनता की छाती धड़कती है, सभ्यता और संस्कृति के हृदय के स्पन्दन सुनाई देते हैं और जन-जन के मन की पीड़ाएँ बोलती हैं. मनीषी स्वयं में एक देश है, एक जनता है, एक पूरी सभ्यता का प्रतीक है. जब वह बिगड़ता है,तो समझना चाहिए कि सारी जनता बिगड़ने को तैयार है. जब वह बदलता है,तब संकेत लेना चाहिए कि सारी जनता बदलना चाहती है. क्रांति के समय जो तलवार चलती है, वह पहले चिंतकों के दिमाग में गढ़ी जाती है. जनता जब भूडोल मचाती है, तब उसका मूल कवियों और लेखकों के असंतोष में होता हैं. " [2]

वास्तव में ये लेखक या कवि समाज से भिन्न प्राणी नहीं होते. वे समाज के वाक्यन्त्र होते हैं, उनकी जिह्वा और कंठ होते हैं. समाज की गतिविधियाँ कवि या लेखक पर अपना प्रभाव डालती रहती हैं. वे युग की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों से अवश्य प्रभावित होते हैं. उनकी शंकाएँ वे ही होती हैं जो समाज के हृदय में चलती रहती हैं और उनके उत्तर भी मुख्यत: उन्हीं प्रश्नों के उत्तर होते हैं जो तत्कालीन समाज में चला करते हैं ।

अतएव किसी काल विशेष की साहित्यिक गतिविधियों और उसके निर्माणात्मक तत्वों के पूर्ण परिज्ञान के लिए उन परिस्थितियों का परिचय

भी आवश्यक होता है. इस प्रकार जहाँ हम किसी साहित्यकार की कृतियों को उसकी समकालीन परिस्थितियों के आलोक में देखकर उसकी भावनाओं को ठीक ढंग से हृदयगंम कर सकते हैं, वहाँ उसकी रचना तत्कालीन मानव समाज की उन गूढ़ अंतवृतियों का प्रकाशन भी करती है जिसका वास्तविक परिचय अन्य मार्गों से प्राप्त करना कठिन है. वास्तव में युग चेता साहित्यकार की कृति का सम्यक् अध्ययन उसके युग की परिस्थितियों से परिचय करा देता हैं. किसी देश के सैनिक जहाँ युद्ध भूमि में युद्ध करके देश की रक्षा करते हैं, वहाँ नेता भाषण देकर और कवि तथा लेखक अपनी लेखनी के द्वारा जनजन में प्राण फूंकते हैं, क्रान्तिकारी जहाँ देश में क्रान्ति फैलाते हैं वहाँ मनीषी अपनी लेखनी द्वारा ही सामाजिक चेतना उत्पन्न करते हैं. श्री कृष्ण सरल द्वारा रचित महाकाव्य " भगत सिंह " में कवि ने इसके नायक भगतसिंह द्वारा स्वर्गीय आचार्य चतुरसेन शास्त्री को अपनी लेखनी द्वारा समाज में क्रान्ति लाने की प्रेरणा कितने सशक्त एवं मार्मिक शब्दों में दी है --

" बाबू जी ! जादूगर हैं आप लेखनी के
फिर क्यों समाज की जड़ता नहीं भगाते हैं ?
बलिदान माँगती है जब अपनी आजादी
क्यों नहीं लेखनी से बलिदान जगाते हैं ?
सामर्थ्य सार्थक होता तभी लेखनी का
जब वह समाज के मुर्दों में जीवन भर दे,
वह जीवन, जो पर्याय बने ज्वाला गिरि का
विस्फोट, भस्म, अन्यायों को जिसका कर दे । " [3]

इस प्रकार वाणी के स्रष्टा कवियों ने समय- समय पर अपनी उद्बोधक एवं ओजस्वी वाणी द्वारा निष्प्राण राष्ट्र में नव-जीवन एवं नयी चेतना का संचार किया है. वास्तव में काव्य एवं परिवेश का अन्योन्याश्रित संबंध है. परिवेश कवि को काव्य सृजन की प्रेरणा देता है और काव्य परिवेश को अंकित

करने के साथ उसमें नयी चेतना के संचार द्वारा परिवर्तन लाता है. साहित्य समाज का दर्पण है और समाज साहित्य की लीलाभूमि है. इस प्रकार न तो साहित्य समाज से कटकर जी सकता है और न समाज ही साहित्य विहीन होकर विकास कर सकता है.

वीर काव्यों की सर्जन की प्रेरणा :-

आकाश में जाज्वल्यमान सूर्य जब अपनी प्रचण्ड किरणों द्वारा इस समस्त विश्व को अपना विजय चिन्ह दिखलाता हुआ, अपने शत्रु अंधकार का पीछा करता हुआ, विजय रथ लेकर आगे बढ़ता है तब एक बार तो सारा विश्व उस भास्कर के चरणों में नत हो जाता है, उससे स्फूर्ति ग्रहण करता है और अपने लिए एक प्रेरणा लेकर आगे बढ़ता है. इसीप्रकार जब कोई वीर पुरुष अपने अस्त्र शस्त्रों की चमक से अन्यायी अथवा अत्याचारी शत्रु का पीछा करता हुआ, अपना विजय रथ लेकर आगे बढ़ता है, तब उस शत्रु के हाथों कष्ट पाने वाली जनता, अपने रक्षक का जयघोष करती है, शत शत मुख से उसका अभिनन्दन करती है. हिन्दी साहित्य के इतिहास गगन में ऐसे अनेक वीरों का दीप्त प्रकाश झलकता है जिनकी आभा से उस समय के जन-जीवन ने अपना वास्तविक रूप देखा था और उसकी शतशः वन्दना की थी. यों तो वीरगाथा काल में भी ऐसी प्रशस्तियाँ देखने को मिलेगी, परन्तु मेरा अभिप्राय उन कोरी चाटूक्तियों से नहीं जिनमें वास्तविकता के नाम पर कुछ भी नहीं, परन्तु मेरा आशय स्पष्ट ही उन वास्तविक वीर प्रशस्तियों से है जिनके स्वरों में, शब्दों में और एक-एक अक्षर में अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध उठने वाले शस्त्रस्त्रों की झनझनाहट है. आगे भी ऐसे वीरों के कार्य कलापों को आधार बनाकर और कई बार तो एक ही विषय वस्तु को लेकर अनेक काव्य लिखे गये.

वर्तमान स्थिति से असन्तुष्ट होकर राष्ट्र अपने इतिहास पर दृष्टि डालता है. तुलनात्मक अध्ययन से वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि यदि

अतीत इतना उन्नत एवं वैभवपूर्ण हो सकता है तो वर्तमान क्यों नहीं वैसा बनाया जा सकता. इस प्रकार अतीत गौरव की स्मृति उनके लिए प्रेरक शक्ति बन जाती है. अतीत की गौरव गाथाओं के साथ साथ यदि कष्टों को वीरतापूर्वक सहन किया हो तो वे भी प्रेरक सिद्ध होते हैं - रेम्ज़ेम्योर (Ramsay Muir) ने इन गाथाओं को राष्ट्रीय चेतना की वृद्धि के लिए पवित्र भोज्य के सदृश बतलाया है । [4]

हिन्दी कविता का जन्म तलवारों की झनझनाहट तथा भालों के नोकों के मण्डप के बीच में हुआ है. हिन्दी के शैशव काल में भारत की राजनीतिक स्थिति अस्थिर थी. राज्यों में परस्पर ईर्ष्या,द्वेष, कलह का साम्राज्य था और दूसरी ओर पश्चिमोत्तर भाग से विदेशी आक्रमण हो रहे थे. चारण या भाट आदि राजा का प्रशस्ति गान किया करते थे. उनके पराक्रम का वर्णन कवियों के लिए स्वाभाविक था क्योंकि वीरता उस युग की प्रधान चेतना बन चुकी थी. वे केवल लेखनी के ही धनी नहीं अपितु तलवार के धनी थे. युद्ध भूमि में जाकर नरपति के कन्धे से कन्धा भिड़ाकर युद्ध किया करते थे और राजाओं को उत्साहित किया करते थे. इस काल की कृतियों में वीर भावना का प्राचुर्य है. इस प्रकार वीरगाथा काल के कवियों के प्रेरणा स्त्रोत तत्कालीन राजे महाराजे एवं तद्युगीन राजनीतिक परिस्थितियाँ ही थी

वीरगाथा काल के अनन्तर भक्ति काल में भी हिन्दी कविता में व्यापक राष्ट्रीय भावनाओं के दर्शन नहीं होते. यद्यपि कबीर, गुरुनानक आदि ने हिन्दू मुस्लिम धार्मिक दुराग्रह दूर करने का संदेश तो दिया किंतु यह संदेश सांस्कृतिक समन्वय का ही एक रूप था. आगे के कवियों में अकबरी दुधारी तलवार से समाज को मुक्ति दिलाने की चेतना का अभाव ही दृष्टि-गोचर होता है, यहाँ तक कि तुलसी की भावना भी धर्म के अवगुण्ठन में लिपटी हुई है. सूर ने कृष्ण के बाल रूप और श्रृंगार का ही मुख्यत: वर्णन किया है.

उन्होंने धर्म रक्षा में सन्नद्ध कृष्ण के वीरत्व की ओर संकेत किया है. तुलसी के साहित्य में रामरावण युद्ध प्रसंग में वीरता के अनेक चित्र मिलते हैं. वास्तव में भक्ति काल में वीर रस के काव्य रचना की प्रेरणा कवियों ने धर्म से ग्रहण की.

हिन्दी साहित्य के रीतिकाल में श्रृंगार और वीर दोनों की रसों की कवित्व धारा साथ-साथ प्रवाहित हुई. रीतिकाल के विशुद्ध वीर काव्यों के प्रणेताओं में - भूषण, लाल, श्रीधर, सूदन और पद्माकर अग्रगण्य हैं. इनमें भी भूषण और लाल सबके शिरमौर हैं. मराठोंने अपनी जिस वीरता और शौर्य से मुगल साम्राज्य के महान वटवृक्ष को धाराशायी कर दिया उनमें प्रेरणा भरने वाला भूषण का ही काव्य है. भूषण के काव्य में करुणा की प्रेरणा से वीर रस की पुष्टि का जो बीज मिलता है, उसी का उन्मेष आगे चलकर आधुनिक काल में हुआ. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने " नीलदेवी " और " भारत दुर्दशा " आदि में वीर तथा करुणा का मेलकर राष्ट्रीय कविता की नयी परंपरा चलाई और आधुनिक काल के सब प्रणेताओं ने इसी पद्धति को अपनाया.

धर्म, सत्य और न्याय के लिए गुरुगोविन्द सिंह ने अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया. धर्म के लिए मर मिटने की प्रेरणा से ही गुरु गोविंद सिंह ने कहा था -

" देहि सिवा वर मोहि इहै, सुभ कर्मन ते कबहूँ न टरौं ।
न डरौं अरि सों जब जाय लरों निसचै करि अपनी जीत करौं ।
अरु सिखहों अपने ही मन को यह लालच हौं गुण तौं उचरों ।
जब आव की औध निदान बनै अति ही रन में तब जूझ मरों । " [5]

आधुनिक काल में वीरगाथा काल की भाँति हमें युद्धवीर के रूप में वीर या वीरता की भावना प्रधानतया नहीं मिलती, परन्तु हम उस भावना को वीरता की भावना कह सकते हैं जिनका वास्तविक तथा ठोस

आधार वीर रस हो. इस काल में अंग्रेजी शासन का दमन चक्र अपने पूर्ण वेग से चल रहा था और देश की राजनैतिक चेतना बलवती होती जा रही थी. जनता में राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए एक प्रबल उमंग जाग्रत हो चुकी थी. अपनी इष्ट सिद्धि के लिए जनता ने क्रान्ति का सहारा लिया और नौकर-शाही को ललकारते हुए बलिदान देने की माँग की. यह मरमिटने का संदेश पाकर भगतसिंह, राज गुरु सुखदेव, करतार सिंह सराबा, उधम सिंह, खुदीराम बोस जैसे प्रभृति वीरों ने अपना बलिदान देकर राष्ट्र में नयी चेतना भरी. इस काल के कवि भी प्राचीन गौरव और संस्कृति को श्रेष्ठ समझकर लोगों में उत्तेजना, स्फूर्ति एवं उत्साह पैदा करने लगे. इसके अतिरिक्त कठिन समय के दौरान राष्ट्र का मार्गदर्शन करने वाले शिवा, प्रताप, गुरु गोविंद की यशगाथा भी मुक्त कंठ से गायी. अतीत की ओर झुकने का प्रमुख कारण यह था कि हमारी वर्तमान दशा ऐसी नहीं है कि इस पर विशेष अभिमान किया जा सके. ऐसी दशा में अतीत गौरव की ओर ध्यान होना स्वाभाविक ही है. मैथिलीशरण गुप्त ने कहा भी है -

" यदि सौभाग्य से किसी जाति का अतीत गौरवपूर्ण हो और वह उसपर अभिमान करे तो उसका भविष्य भी गौरवपूर्ण हो सकता है. जो जिस बात पर अभिमान करता है अथवा अभिमान करना सीखता है- वह एक न एक दिन उसके अनुकूल कार्य करने की चेष्टा भी करता है. पतित जातियों को उनके उत्थान में उनके अतीत गौरव का स्मरण बहुत बड़ा सहायक होता है. सच तो यह है कि आत्म विस्मृति ही अवनति का मूल कारण है और आत्म स्मृति ही उन्नति का. यदि आज हम अपने पूर्वजों के कृत्यों पर गर्व कर सकते हैं तो कौन नहीं कह सकता कि एक दिन चाहे वह दिन दूर ही क्यों न हो स्वयं भी उनका सा गौरव प्राप्त करने के प्रयत्न करके उनके सच्चे वंशज कहलाने की भी चेष्टा कर सकते हैं. " [6]

भारत वर्ष के इतिहास में ही नहीं वरन समस्त एशिया के इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी एक युगान्तकारी शताब्दी रही है. इस शताब्दी में

एशिया के प्रायः सभी देशों में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक परिवर्तन हुए हैं. इस काल में स्वदेशाभिमान की ऐसी ज्योति प्रज्ज्वलित हुई कि अनन्त काल तक संसार के सब देश भक्तों को वह दीपस्तंभ की तरह मार्ग-दर्शक सिद्ध होगी. साहित्यकार मूलतः सामाजिक प्राणी है वह समाज के सुख-दुःख, हर्ष- विषाद, आशा- आकांक्षा, स्वप्न- कल्पना, अभाव-अतृप्ति, संघर्ष पलायन तथा दर्शन चिन्तन से स्पष्टतः प्रभावित होता है. उसकी चिन्तन धारा के निर्माण में समसामायिक परिस्थितियों का विशेष योगदान रहता है. अस्तु आधुनिक काल ‖ 1920-1965 ‖ के वीर काव्यों का विवेचन करने से पूर्व आधुनिक हिन्दी वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोतों का निरुपण अप्रासंगिक न होगा. आधुनिक हिन्दी वीर काव्यों के प्रेरणा स्त्रोत संक्षेप में इस प्रकार हैं-

1. आधुनिक युग का नवजागरण
2. सांस्कृतिक पुनर्जागरण
3. राष्ट्रीय आन्दोलन
4. आर्थिक परिस्थिति
5. विदेशी आक्रमण

1. आधुनिक युग का नवजागरण :-

ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के कारण भारत की अर्थ नीति, शिक्षा पद्धति, यातायात के साधनों आदि में बुनियादी परिवर्तन हुए. इनके फलस्वरूप समाज का जो आधुनिकीकरण आरम्भ हुआ, वह पुराने धार्मिक संस्कारों, रीति-नीतियों, संघटनों से मेल नहीं खाता था. नयें यथार्थ और पुराने संस्कारों के बीच सामंजस्य की आवश्यकता महसूस की जाने लगी. इस सामंजस्य के साथ ही नये भारतीय समाज के निर्माण की प्रक्रिया आरम्भ हुई. इस काल में धर्म के नाम पर किये जाने वाले पाप और भ्रष्टाचार समाप्त नहीं हुए थे. जनता अब भी बाह्याडम्बरों तथा अनेक अंध विश्वासों का अनुकरण

कर रही थी. अनेक अशास्त्रीय धार्मिक पद्धतियों का प्रचलन हो रहा था परन्तु जैसे- जैसे समय में परिवर्तन होता गया वैसे- वैसे इस ओर भी व्यापक क्रान्ति दृष्टिगोचर होने लग गयी. दूसरी ओर अंग्रेजों ने अंग्रेजी शिक्षा तथा ईसाइयत के प्रचार के माध्यम से हमारी सांस्कृतिक परम्परा पर गंभीर प्रहार किए. इसके फलस्वरूप एक वैचारिक क्रान्ति का उदय हुआ.

आधुनिक भारत की नींव का पहला पत्थर राजा राम मोहन राय ने रखा. आधुनिकीकरण के संबंध में ही उन्होंने सन् 1888 में ब्रह्म समाज की स्थापना की. अरबी एवं फारसी का बृहत ज्ञान होने के कारण वे अफलातून, अरस्तू, प्लॉटीनस आदि प्राचीन यूनानी विचारकों से परिचित हुए. इन्होंने समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाकर पूर्व और पश्चिम के स्वस्थ प्रगतिशील तत्वों को ग्रहण किया. उन्होंने विश्रृंखलित समाज को संगठित कर नयी चेतना जागृत की. कर्मकाण्ड और अन्ध विश्वास का विरोध करने के लिए उन्होंने उपनिषदों के साक्ष्य का उपयोग किया. विविध धर्मों का अनुशीलन करने के उपरान्त उन्होंने सामाजिक सुधारों के द्वारा शिक्षा का का प्रसार करते हुए नवीन जागृति के द्वार उन्मुक्त किए. सती प्रथा, बाल- विवाह तथा मूर्तिपूजा जैसी कुप्रथाओं का विरोध किया. उस समय ये अकेले ऐसे व्यक्ति थे जो अंध श्रद्धा और रूढ़ियों के विरुद्ध लड़े. जाति प्रथा को उन्होंने अमानवीय और राष्ट्रीयता विरोधी कहा. विधवा- विवाह तथा स्त्री-पुरूष के समानाधिकार जैसे सामाजिक आन्दो- लन का भी सूत्रपात उनके द्वारा हुआ. वे पश्चिमी संस्कृति का वैज्ञानिक और भौतिकवादी स्वरूप ग्रहण करते हुए भारतीय दर्शन और धर्म, समाज, संस्कृति के बदलते युग के अनुसार आधुनिक स्वरूप प्रदान किया. एक ओर उन्होंने भारतीय सांस्कृतिक धरातल पर दृष्टि रखी तथा दूसरी ओर पश्चिमी सभ्यता को आत्मसात किया. इस प्रकार पूर्व और पश्चिम के समन्वय का प्रतिफलन नवजागरण के रूप में दिखाई देता है. भारत के उज्ज्वल भविष्य के लिए एक दूरदर्शी की तरह उन्होंने अंग्रेजी के प्रचार का समर्थन किया. ब्रह्म समाज द्वारा राजा साहब ने एक ओर तो हिन्दुत्व को भर्त्सना से बचाया, ईसाइयत से देश की रक्षा की, और यूरोप के

क्रांतिकारी बुद्धिवादी विचारों को ग्रहण कर जागृति की लहर दौड़ाई. नारी उत्थान के लिए भी उन्होंने प्रयत्न किये जिसके फलस्वरूप पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, नारी-शिक्षा, अंतर्जातीय विवाह, नारी के साम्पत्तिक अधिकारों को प्राप्त कराने के लिए अभियान चलाये. उनके कार्यों का मूल्यांकन करते हुए दिनकर के शब्दों में हम कह सकते हैं कि वे धर्म के प्रचारक कम, समाज के सुधारक अधिक थे. उन्होंने जो कुछ किया, उसे हम सांस्कृतिक- राष्ट्रीयता का कार्य कह सकते हैं. भारत की राजनीतिक राष्ट्रीयता इसी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का विकसित रूप है. " [7]

अन्य समाज सुधारकों का वर्णन हमने सांस्कृतिक पुनर्जागरण में किया है.

महात्मा गांधी जैसे देशभक्त नेता और समाज सुधारक ने भी धार्मिक विशालता का दृष्टिकोण लेकर भारतीय राजनीति के कर्मक्षेत्र में पदार्पण किया. उनका यह दृढ़ विश्वास था कि राजनीतिक परतंत्रता से मुक्ति के लिए एक स्वस्थ और स्वतंत्र समाज की आवश्यकता है और यह तब संभव है जब भारतवासी अपनी धार्मिक संकीर्णता के दायरे से बाहर आयेंगे. भारतवासियों के भी अज्ञानता के चक्षु ≠ खुल गये थे और वे अत्याधिक दूरदर्शी हो गये. वे किसी भी धार्मिक सिद्धान्त को स्वीकारने से पहले अपने मस्तिष्क की कसौटी पर कसते थे. लोगों में अब विवेचनात्मक और वैज्ञानिक बुद्धि द्वारा अपने भले बुरे की जांच करने की रुचि बढ़ने लगी. धर्म का स्वरूप पहले से व्यापक होने लगा. दीन दुःखी जनता से सहानुभूति, असहाय और पीड़ित जनता के साथ प्यार, प्रेम और अनुराग धर्म के ही रूप समझे जाने लगे. किसानों और मजदूरों के उत्थान के लिए ध्यान दिया जाने लगा. अछूतों का प्रश्न भी एक जटिल समस्या के रूप में मुँह बाये खड़ा था. जमींदारों, तालुक्येदारों की शोषण पद्धति के क्षुब्ध अछूत और निम्न जातियों के लोग ईसाई धर्म की ओर आकृष्ट हो रहे थे क्योंकि ईसाई धर्मावलम्बी उन्हें अपने साथ उठने बैठने और नौकरियों का

मालय दे रहे थे. गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यों में अस्पृश्यता निवारण को प्रमुख स्थान दिया. उन्होंने अछूतों को " हरिजन " नाम से विभूषित कर उनकी दशा सुधारने के लिए"हरिजन सेवक संघ " की स्थापना की.

उपर्युक्त विवेचन से प्रकट आधुनिक युग के नवजागरण का सीधा प्रभाव वीर काव्यों की रचना पर नहीं पड़ता, किन्तु यह सांस्कृतिक चेतना एक प्रकार से परवर्ती युग के राष्ट्रीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि के रूप में प्रतिष्ठित है. उसने मानव जीवन की संस्कार हीनता, अंध परम्परा पालन, सामाजिक रूढ़ियाँ, धार्मिक अव्यवस्था, भाग्यवादिता आदि प्रवृत्तियों को देखकर व्यक्ति और समाज का सामंजस्य करते हुए उदार मानवतावादी दृष्टि-कोण प्रस्तुत किया. 1904-5 की जापान की रूस पर विजय ने यूरोपीय श्रेष्ठता और अजेयता के प्रति लोगों के विश्वास को घटाया जिसने भारत-वासियों को स्वतंत्रता प्राप्त करने में सहायता प्रदान की. प्रगतिवाद की (1937-1945) तक कविताओं में मार्क्सवादी प्रभाव स्पष्ट होता है. इस काल के कवियों ने आत्म बलिदानात्मक वीर भावना को साहित्य में स्थान दिया. निम्न जातियों, विधवाओं, अछूतों और नारी उद्धार पर साहित्य रचा गया. इस प्रकार यदि इन नवजागरण ने सम्पूर्ण रूप से वीर काव्यों को प्रभावित नहीं किया तथापि आंशिक रूप से उसे वीर काव्यों के प्रेरणास्त्रोत के रूप में स्वीकार कर सकते है.

सांस्कृतिक पुनर्जागरण :-

जैसा कि पूर्ववर्ती विवेचन से प्रकट है कि आधुनिकीकरण और ईसाइत के प्रचार के साथ-साथ हमारे देश में समाज- सुधार के जो प्रभाव हुए उन्होंने अनेक सांस्कृतिक युग द्रष्टाओं को जन्म दिया. यह एक विचित्र संयोग ही है कि जिस समय मैकाले ने अंग्रेजी शिक्षा पद्धति की नींव डाली, लगभग उन्हीं दिनों रामकृष्ण परमहंस और राजा राममोहन राय जैसे मनीषियों का आविर्भाव हुआ. इस समय कई आन्दोलन चले जिन्होंने सांस्कृतिक पुनर्जागरण

में महत्वपूर्ण योगदान दिया. प्रार्थना समाज, आर्य समाज, स्वामी रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानन्द, थियोसोफिकल सोसायटी, श्री अरविन्द के वेदान्त दर्शन आदि प्रसिद्ध हैं.

प्रार्थना समाज के सुधारवादी आंदोलनों द्वारा जाति प्रथा और बाल विवाह के विरोध के साथ ही स्त्री शिक्षा का प्रचार और विधवा विवाह का समर्थन किया गया. सामाजिक एकता और युगानुरूप भारतीय आदर्शों को मोड़कर राष्ट्रीय भावनाओं के प्रसार में प्रार्थना समाज का विशेष योगदान रहा. इस संस्था द्वारा स्थापित किए हुए " दलितोद्धार मिशन " ने बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया. जिसके उद्योग से जाति तथा समाज में काफी सुधार हुआ. अछूतोद्धार ही इसका विशेष ध्येय था. इसका नेतृत्व गोविन्द रानाडे कर रहे थे. उन्होंने समाज की दशा को सुधारने के लिए उत्साहपूर्ण कार्य किया. वे बड़े विद्वान और समाज तथा धर्म के महान सुधारक थे. उनके हृदय में देश प्रेम कूट-कूट कर भरा था . [8] इस प्रार्थना समाज का एक मात्र उद्देश्य सामाजिक सुधार एवं भारतीय संस्कृतिके प्रति अनुराग उत्पन्न करना था. वास्तव में प्रार्थना समाज ने सच्ची सामाजिक चेतना का प्रसार किया. मानव सेवा को ही इस संस्था ने ईश्वर सेवा मानकर समाज सेवा का प्रमुख कार्य किया.

बंगाल और महाराष्ट्र के उपर्युक्त क्षेत्रीय प्रयासों के अतिरिक्त अखिल भारतीय सांस्कृतिक पुनर्जागरण का कार्य स्वामी दयानंद सरस्वती, विवेकानन्द तथा स्वामी रामतीर्थ प्रभृति मनीषियों द्वारा सम्पन्न हुआ. जिस समय दयानंद जी का प्रादुर्भाव हुआ उस समय धर्माडम्बर, अंध विश्वास, पाखण्ड तथा अनेक धार्मिक कुरीतियों से सारी जाति ग्रस्त हो रही थी. जादू-टोने, भूत प्रेतादि अभी भी लोगों के जीवन से विलुप्त नहीं हुए थे. ऋषि दयानन्द तथा उनके आर्य समाज ने सामाजिक सुधारके साथ- साथ धर्म में भी क्रान्ति लाने का प्रयास किया. उन्होंने व्यर्थ के आडम्बरों, अंध विश्वासों

और रूढ़ियों के विरुद्ध उपदेश देते हुए विश्व संस्कृति की ओर प्रेरित किया. उन्होंने वेदों के आधार पर सभी वर्गों का एकीकरण करते हुए देशभक्ति एवं राष्ट्रीय भावना का संचार कर दिया. उन्होंने हमारी संस्कृति के उच्चतम तत्व प्रस्तुत किए. भारतीयों में आत्माभिमान की ऐसी तीव्र भावना उद्भूत कर दी कि वह भी अपनी प्राचीन संस्कृति तथा सभ्यता पर गौरव करने लगीं. " इस प्रकार वेद के आधार से जो देश भक्ति निःसृत हुई उसमें उच्चता, प्रेरणा, एकता, सांत्वना और उल्लास तथा उत्साह भरने की शक्ति थी. यह देश भक्ति केवल अतीत के प्रति अनुराग और गर्व जगाने मात्र से पुष्ट नहीं हुई, प्रत्युत अहिन्दुओं के हृदय में भारत के प्रति श्रद्धा जगा कर इसे और भी बढ़ावा दिया गया. अहिन्दू भारतीयों के हृदय में ऐसे भारत के प्रति श्रद्धा जगाई गई जो विश्व के सर्वोच्च दर्शन और प्रथम विश्व संस्कृति का जन्म स्थान है. "[9] स्वामीजी का व्यक्तित्व सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में उतना ही क्रान्तिकारी था जितना कि राजनीतिक क्षेत्र में तिलक का.

आर्य समाज एक सशक्त आंदोलन या क्रान्ति का रूप माना जा सकता है जिसने अपने प्रचण्ड तर्कों से ईसाई और मुस्लिम धर्मों के दोषों को प्रत्यक्ष गिनाकर हिन्दू धर्म की प्रतिष्ठा की. वैदिक धर्म के श्रेष्ठ तत्वों को पुनः प्रकाश में लाये. स्त्रियों को समानाधिकार देकर उन्होंने दयनीय स्थिति से उबारा एवं बाल-विवाह का प्रबल विरोध किया. उन्होंने कड़े शब्दों में जाति व्यवस्था का आधार कर्म और गुणों को माना न कि वंश को. स्वामी की अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए चारों दिशाओं में भ्रमण करके इस आंदोलन को सफल बनाकर सांस्कृतिक जागरण द्वारा उदारतापूर्वक समाज सुधार किए. उन्होंने अपनी ही भाषा तथा अपनी ही संस्कृति के आधार पर जाति को सचेत कर महान राष्ट्रीय कार्य कर दिखाया. इस प्रकार दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज ने वैदिक परम्परा के प्रति गौरव भावना जगायी और उसे राष्ट्र प्रेम की ओर उन्मुख करके राष्ट्रीय कर्तव्य की

पहचान करायी, वे चाहते थे कि भारतीय अपने प्राचीन गौरव की स्मृति पर अपने पूर्वजो जैसा आदर्श अपने जीवन में लायें, " वे पहले नेता थे जिन्होंने स्वराज्य का महत्व प्रस्तुत कर मातृभूमि की महान सेवा की और घोषित किया कि किसी दूसरे का अच्छा शासन स्वशासन का स्थान नहीं ले सकता. [10] यही कारण है कि ब्रिटिश सरकार किसी समय इसको क्रान्तिकारी राजनैतिक सत्ता समझती थी क्योंकि लाला लाजपतराय जैसे देश की स्वतंत्रता पर मर मिटने वाले नेता इसी संस्था के सदस्यों में से थे. स्वामी श्रद्धानंद दयानंद सरस्वती के इस कार्य में एक रूप हो गये. बादशाही शासन के दिनों में मूल रूप हिन्दू किंतु बलात मुसलमान बनाये गये दिल्ली के आसपास के हजारों राजपूतों को उन्होंने शुद्ध कर लिया. यह शुद्धिकरण आन्दोलन श्रद्धानन्द जी ने बड़े जोर शोर से चलाया.

महर्षि दयानंद जिस समय उत्तरी भारत में अपने कार्य में संलग्न थे उस समय बंगाल में एक न्यारी और विचित्र शक्ति प्रादुर्भूत हुई जिसने अपने अलौकिक जीवन के प्रभाव से अनेक विद्वानों को वशीभूत किया. वे थे राम--कृष्ण परमहंस . उनका धार्मिक दृष्टिकोण बहुत व्यापक था और वे सब धर्मों की मौलिक एकता पर विश्वास करते थे. उन्होंने अपने संत जीवन से मानों प्राचीन ऋषियों की पुण्य स्मृति को संजीव कर दिया. इन्होंने कुरीतियों और कुप्रथाओं का घोर खंडन किया. उन्होंने दीन दुखियों की सेवा करने का संदेश दिया. उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने भौतिकवादी देशों को आत्मिक उन्नति का पाठ सिखाया और भारत-वासियों को अपने धर्म के स्वस्थ तत्वों को ग्रहण करते हुए भौतिक प्रगति का संदेश दिया.

स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण मिशन की स्थापना पर अपनी दूरदर्शी सारग्राहिणी शक्ति द्वारा भारतीय सांस्कृतिक चेतना देते हुए सामाजिक सुधारों पर योगदान दिया. मानवीय समता के विश्वासी होने के कारण उन्होंने जाति सम्प्रदाय, छुआछूत आदि का विरोध किया. वंश

परम्परा से अथवा जन्मजात कुल संबंधी गुणों की दुहाई देकर जिस बर्बर व पाशविक मतवाद के द्वारा मनुष्य के हीन, अन्त्यज, पंचम आदि नाम दिये जाते हैं उस मूढता पर कटु आलोचना की. इन्होंने विश्व संस्कृति और लोक हिताय को दृष्टि में रखकर राष्ट्रीय भूमिका के सुदृढ़ निर्माण में स्तुत्य योगदान दिया. इन्होंने भारतीय आध्यात्मिकता को सर्वोच्च मानते हुए पाश्चात्य से विनिमय करना चाहा और सामाजिक उदारवादी विचारों को अपनाने की चेष्टा की. उन्होंने प्रवृत्ति और कर्मठता का संदेश देकर शक्ति की साधना में देश का कल्याण देखा क्योंकि वीरता तभी आ सकती थी. दुर्बलता और अत्याचार का विरोध करते हुए उन्होंने मानव सेवा को ही सच्ची ईश्वरोपासना माना. एकता का संदेश देकर उन्होंने सांस्कृतिक राष्ट्रीयता को विकसित किया. " बीसवीं सदी के नवयुवक का आदर्श बताते हुए वे कहते हैं कि ये नवयुवक ~~एक~~ सब प्रकार के धर्म द्वन्द्व का परित्याग, स्वाधीनता के नाम पर व्यक्तिगत स्वेच्छाचार का परित्याग, जातीयता के नाम पर दूसरों की सम्पत्ति का निषेध, एवं धर्म के नाम पर दूसरों के धर्म के प्रति अकारण आक्रमण का घोर विरोध करें. उन्हें जातीय, धार्मिक व सामाजिक स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए आपस में एक दूसरे के साथ भावों का आदान प्रदान करना होगा, ईर्ष्या तथा संकीर्णता को छोड़कर अपने अपने सामर्थ्य के अनुसार दूसरों की लौकिक व आध्यात्मिक उन्नति के लिए सहायता करनी होगी । " [11] अज्ञ, उत्पीड़ित, दरिद्र पतितों की बात ही नहीं- समाज में चिरकाल से घृणित वेश्याओं को उन्होंने आशीर्वाद दिया और कहा - " पथ पर उन्हें देखकर घृणा से नाक भौं न सिकोड़ो. वे ही ढाल की तरह खड़ी रहकर शत शत सतियों की लम्पटों के अन्याय अत्याचार से रक्षा कर रही है, इसलिए उन्हें धन्यवाद हो. उनसे घृणा न करो । " [12] समाज की हीन अवस्था के प्रतीकार का भी उन्होंने प्रयत्न किया. वे मूर्तिपूजा और जाति भेद का खण्डन करने वाले थे. एक ओर इन्होंने जिस प्रकार आधुनिक सुधारवाले सम्प्रदायों की वैदेशिक भावपूर्ण कार्यप्रणाली की तीव्र समालोचना की है तो

दूसरी ओर उन्होंने उन्नति के विरोधी संकीर्ण भाव वाले कट्टर पंथियों के पुराने संस्कारों का, जिनमें वे अंध विश्वासी होकर अपने को जकड़े हुए लोगों का उपहास भी उड़ाने में कोई कसर उठा नहीं रखी. देश प्रेम भी उनकी रग-रग में गतिशील था. उनमें प्राचीनता और नवीनता का सुन्दर समन्वय मिलता है. उन्होंने ही हीनता की भावना से ग्रस्त देश को यह अनुभव कराया कि इस देश की संस्कृति अपनी अपनी श्रेष्ठता में अद्वितीय है, इस देश का आध्यात्मिक चिन्तन असमान्तर है. देश की स्वतंत्रता पर ध्यान आकृष्ट कराया जिससे पश्चिम की भौतिकता से चमत्कृत देशवासियों को पहली बार एहसास हुआ कि हमारी अपनी परंपरा में भी कुछ ऐसी वस्तुएँ हैं जिन्हें संसार के समक्ष गौरवपूर्ण ढंग से रखा जा सकता है. उन्होंने भारतीय संस्कृति को ऊँचा उठाते हुए देशवासियों को सदा एकता तथा देश भक्ति का संदेश दिया.

थियासाफीकल सोसायटी के संस्थापक बलावत्सकी थे जिन्होंने न्यूयार्क में सन् 1875 [13] में इसकी नींव रखी. वे भारत भी आये परन्तु वास्तविक रूप में इस देश में इस सोसायटी का प्रसार ऐनी बेसेन्ट ने किया. इन प्रवर्तकों ने भ्रातृ भावना को विकसित करते हुए उन्होंने भारतीय चिन्तनधारा को श्रेष्ठ ठहराया. समाज सेवा और शिक्षा के कार्यों को अपने हाथ में लेकर प्राचीन भारतीय संस्कृति और गौरव के प्रति देशवासियों का ध्यान आकर्षित कराया. ज्ञान के आलोक में रुढ़ियों और कुप्रथाओं को मिटाने, एवं पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण की प्रवृत्ति को भी कम किया. इसने पुनरुत्थानवादी भावना के विकास में योग देते हुए प्राचीन धर्म की मान्यता और उदात्तता को लोगों में प्रस्तुत किया. इस प्रकार भारतीयों की चिर निद्रा को भंग कर उन्हें अपने अतीत के इतिहास, संस्कृति, धर्म आदि पर गर्व करने की प्रेरणा दी.

इसी तरह योगी अरविंद ने अतिमानव की कल्पना करते हुए वैयक्तिक मुक्ति के संधान की अपेक्षा समग्र मानवता के क्लेशों की मुक्ति और समाज सेवा का संदेश दिया. पूर्ण अनासक्त होकर भी वे वैराग्य ग्रहण कर

जीवन से पलायन नहीं सिखलाते. वे समष्टि के लिए समाधान खोजते हैं, व्यष्टि के लिए नहीं. भौतिक जीवन की एकांगिता देखकर वे पूर्व पश्चिम के बीच एक समन्वय रेखा बन गये. वे धर्म को वैज्ञानिक और विज्ञान को धर्म बनाकर कर्मठ जीवन का संदेश देते हैं.

सांस्कृतिक पीठिका के संदर्भ में लोकमान्य तिलक को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता. गीता रहस्य में उन्होंने जीवन के प्रवृत्ति मार्ग पर बल देकर कर्मठ जीवन की ओर प्रेरित किया. मैथिलीशरण गुप्त ने भी भारत भारती की रचना करके सामाजिक विकृतियों की नग्न झांकी दर्शाने का प्रयास किया. वे अविद्या और अज्ञान के कारण निंदनीय रूढ़ियों और अंध-विश्वासों से ग्रस्त समाज की कटु आलोचना करते हैं -

" सब अंग दूषित हो चुके हैं अब शरीर समाज के,
संसार में कहला रहे हैं हम फकीर लकीर के ।
क्या बाप दादों के समय की रीतियाँ हम तोड़ दें,
वे रुग्ण हों तो क्यों न हम भी स्वस्थ रहना छोड़ दें ।। " [14]

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय पुनर्जागरण यथार्थतः सांस्कृतिक आंदोलनों के माध्यम से ही संभव हुआ. अंग्रेजी शिक्षा ने एक ऐसा नवीन चित्र उपस्थित कर दिया जिससे परम्परागत संस्कृति के नवोत्थान में सहायता मिली. हमारी रूढ़ि ग्रस्तता, कूप मंडूकता पाश्चात्य वैज्ञानिक विचारधारा द्वारा सच्चे अर्थों में प्रगतिशील बनी. स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की भावनाओं से नई क्रान्ति आई जो हमें मानसिक दासता से मुक्त करने का सफल माध्यम बनी. साक्षरता आन्दोलन, प्रौढ़ शिक्षा आंदोलन, अछूतो और स्त्रियों की शिक्षा में ये कार्य बड़े प्रारंभ हुए. बड़े-बड़े मंदिर अछूतों के लिए खोल दिये गये. भारतीय नारी भी चारदीवारी से बाहर निकल पड़ी. जनता में सामाजिक कुरीतियों के प्रति घृणा तथा अपने धर्म, जाति के लिए आकर्षण बढ़ने लगा. समस्त देशवासी सचेत होकर प्रगति पथ पर अग्रसर हो रहे थे. ये सांस्कृतिक

पुनर्जागरण वीर काव्यों की सृजन में पूर्ण रूपेण सहायक हुआ. इन्हीं से प्रेरणा प्राप्त कर कवियों ने अपने काव्यों के लिए विषय रामायण, महाभारत से लिए और नायक पद पर भी प्राचीन वीरों को प्रतिष्ठित कर प्राचीनता का स्मरण कराते हुए नवीन चेतना भरी जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए सहायक सिद्ध हुई. वीरों का नामोच्चारण मात्र निष्प्राणों में शक्ति का संचार कर देता है इसलिए कवि पूर्वजों के पौरूष का आदर्श सम्मुख रख जाति में साहस की व्यंजना कर लोगों में देश पर मर मिटने की भावना पैदा हुई और अतीत के बल पौरूष के आदर्श द्वारा वर्तमान पौरूषहीन जाति में प्राणों का संचार हुआ.

राष्ट्रीय आन्दोलन :-

स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय आंदोलनों के अखण्ड अभियान का आरंभ एक प्रकार से 1905 ई० में बंग-भंग आंदोलन से होता है. इसके पूर्व सन् 1857 ई० में जो क्रांति हुई थी, उसका कांग्रेस शासकों ने बड़ी कठोरता के साथ दमन किया और इसके पश्चात् से देश वासियों के जनमानस को अपने आधीन तथा अनुकूल बनाने के उनके व्यापक प्रयास आरंभ हुए जिसकी चर्चा पूर्ववर्ती विवेचन के अन्तर्गत की जा चुकी है. किन्तु इसी बीच वासुदेव बलवन्त फड़के जैसे कुछ क्रांतिकारियों के असफल प्रयास हुए जिनसे शासनतंत्र ने यह अनुभव किया कि स्वतंत्रता की चिनगारी पूर्णतया बुझ नहीं पायी थी. भीतर-भीतर सुलगने वाले विद्रोह की जानकारी से शासन तंत्र अवगत रहे, इसके लिए ए० के० ह्यूम ने इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना सन् 1885 ई० में की.[15] तब से लेकर सन् 1904-5 तक कांग्रेस की प्रवृत्तियाँ 1904-1095 पूर्व प्रस्तावों द्वारा सरकार के सामने अपनी बात रखने ०००० की रही. सन् 1905 में देश की राष्ट्रीय चेतना में एकाएक एक नया मोड़ आया और एक साथ लाला लाजपतराय, बालगंगाधर तिलक और विपिनचन्द्र पाल ये तीन स्वतंत्रता सेनानी भारत गगन में उदित हुए. इसी समय तिलक ने घोषणा की थी कि " स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं उसे लेकर रहूँगा. " 1905 ई० तक कांग्रेस आशा तथा निराशा के झूले में झूलती रही और उसने अनुनय-विनय की नीति को अपनाये रखा. अनेक वर्षों तक निराशा का

मुँह देखने के कारण उसके स्वरूप में उग्रता आने लगी. उसकी शक्ति बढ़ने लगी और वह देशव्यापी संस्था के रूप में कार्य करने लगी. उधर ब्रिटिश सरकार ने कोई ऐसा ठोस पग न उठाया जिससे असन्तुष्ट एवं निराश जनता को सांत्वना मिल सकती. इसके विपरीत लार्ड कर्जन की दमनकारी नीति इंडियन यूनिवर्सिटी एक्ट, बारह सुधारों का बजट, सरकारी गुप्त समितियों का कानून, तिब्बत में मिशन भेजना आदि के कारण भारतीयों के प्रति कठोरता हो रही थीं, यहाँ तक कि उसने बंगाल को दो भागों में विभाजित करने का निर्णय भी कर लिया. सरकार की निर्मम नीति की प्रतिक्रिया स्वरूप क्रांतिकारी युवकों ने सरकार को उलट देने के लिए हिंसात्मक उपायों का सहारा लिया.अंग्रेजी शासन ने मुक्ति आंदोलन को दबाने की भरसक चेष्टा की किन्तु स्वातंत्र्य चेतना से अनुप्राणित राष्ट्रीय आंदोलन दबाये नहीं जा सकें. " युगान्तर ", " संध्या ", " वन्दे मातरम् " आदि पत्र नयी जागृति के प्रचारक बने. हिंसा, सैनिक विद्रोह, राजनीतिक हत्याओं, बमबाजी और राजद्रोह के खुले आम प्रचार का एक दौरा सा चल पड़ा और सरकार ने इसका जवाब कड़ी दमन नीति से दिया. जनता को कुछ राजनीतिक अधिकार अवश्य मिले किन्तु सन् 1914 में प्रथम बार विश्व युद्ध छिड़ जाने से भारत-वासियों में एक नई जन- जागृति देखने में आई. पाश्चात्य समाज और साहित्य के अधिकाधिक सम्पर्क में आने से सुप्त चेतना पुनः करवट लेने लगी और व्यापक मानवीय दृष्टि से प्रचार के कारण विश्व समस्याओं तक हमारी दृष्टि फैल सकी. जनता ने शासन को उस गाढ़े समय जन धन की अपूर्व सहायता दी जिससे जन साधारण में आत्म विश्वास जाग्रत हुआ. सन् 1918 में युद्ध समाप्त हुआ तो शासन को आंतरिक मामलों में देखने का अवसर मिला किन्तु अब देश की परिस्थितियों में आमूल परिवर्तन हो चुका था. देश का मनोबल ऊँचा हो चुका था. इसके बाद शासन सुधार संबंधी जो बातें अंग्रेजी शासन द्वारा प्रस्तुत की गई, वे किसी भी कीमत पर भारतीय जनता को मान्य नहीं हुई. वे असन्तुष्ट ही रहे. रौलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह प्रारम्भ हुए.रौलेट ऐक्ट को शासन ने वापस नहीं लिया. और जनता की भावनाओं को कठोरता से कुचला.

इसी बीच 13 अप्रैल 1918 में इतिहास प्रसिद्ध अमृतसर के जलियाँ वाले बाग का हत्याकाण्ड हुआ. यह देश के मुँह पर एक तमाचा था. जनता इस अत्याचार से तिलमिला उठी. तटस्थ जाँच न होने के कारण गाँधीजी ने असहयोग आंदोलन चलाया. चौराचौरी की हिंसात्मक घटना के पश्चात् गाँधीजी ने सत्याग्रह को स्थगित कर दिया.

जनवरी 1921 को किसान आंदोलन के संबंध में " मुंशीगंज गोलीकाण्ड " हुआ. " प्रताप " में गणेशशंकर विद्यार्थी ने " डामर शाही ओ डामर शाही " शीर्षक का अग्रलेख लिखकर मुंशीगंज गोली काण्ड का पर्दाफाश कर दिया. [16]

सम्पूर्ण देश का वातावरण घुटन, पीड़ा, असहायता और विवशता से क्षुब्ध था. युवा, वृद्ध और बालक क्या चहार दीवारी में रहने वाली नारी भी पुरुषों के साथ आततायी शासन का लोहा लेने के लिए तत्पर हो उठी. गाँधीजी की क्रान्ति चेतना, सत्याग्रह आंदोलनों के माध्यम से मध्यवर्ग, किसान, श्रमिक वर्ग आदि सबको साथ लेकर सामूहिक राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखरित कर सकी. अवध के किसान आंदोलन के संबंध में धर्मयुग में अमर बहादुर सिंह " अमरेश " के लेख " इतिहास के विस्तृत पन्ने एक और " जलियांवाला " में कहा है -

" अवध का किसान आंदोलन तालुकेदारों के दमन चक्र से ऊबी हुई जनता का आंदोलन था, जो सम्पूर्ण अवध में व्यापक रूप ले चुका था. प्रतापगढ़, फैजाबाद, जौनपुर, बाराबंकी आदि इसके केन्द्र बिन्दु थे. प्रतापगढ़ के किसानों ने जेल का फाटक तोड़कर अपने बंदी किसानी नेताओं को रिहा किया था. इस आंदोलन के सूत्रपात बाबा रामचन्द्र तथा जानकीदास थे. फुरसत गंज गोलीकांड के बाद मुंशीगंज गोलीकांड की पृष्टभूमि " चन्दनिहा कांड " से प्रारम्भ होती है । " [17]

1923 में गदर की विफलता और असहयोग के नशेपर सवार होने का अपूर्व धैर्य दो भारतीय क्रांतिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल और योगेशचन्द्र

चटरजी थे. उन्होंने " हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन " नाम से भारतीय प्रजातंत्र समिति की स्थापना की और क्रांति का अग्नि कुण्ड पुनः नवीन उत्साह से प्रज्वलित किया. इन्होंने " बलराज " हस्ताक्षर से एक अत्यन्त स्फोटक गुप्त पत्रक निकाल कर बाँटा. यह पत्रक देखते ही सरकार की नींद खट से खुल गयी. इधर इतने में लखनऊ से आठ मील दूर काकोरी के स्टेशन पर डाका पड़ा. चलती रेलगाड़ी जंजीर खींचकर रोकी गयी. इस रेलगाड़ी की रक्षा के लिए सशस्त्र सैनिक थे क्योंकि इसमें सरकारी खजाना था. लेकिन नौ शेर युवकों ने खजाना गोलियों का गोलियों से उत्तर देते हुए लूट लिया. कुछ ही दिनों बाद सरकार ने चालीस व्यक्तियों को पकड़कर काकोरी कांड का मुकदमा खड़ा किया. इस कार्य में उपर्युक्त गुप्त पत्रक जापान में रास बिहारी बोस के पास गुप्त रूप से भेजे जाते समय पकड़ा गया. इसी कारण सरकार को " हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसियेशन " के कार्य का पता लगा. शचीन्द्रनाथ सान्याल, योगेशचन्द्र चटरजी, पं० रामप्रसाद आदि को कठोर सजायें दी गयीं परन्तु " आजाद " आजाद ही रहे. 1923-24 में कांग्रेस का झुकाव धारासभाओं की ओर गया और उसका नेतृत्व देशबन्धु चित्तरंजनदास ने स्वराज्य पार्टी बनाकर किया. पर यह योजना असफल हुई. 1926 में सांप्रदायिक दंगे देश भर में प्रारंभ हो गये.

सन् 1927 में अंग्रेजी सरकार ने साइमन कमीशन नियुक्त हुआ जिसका स्वागत काली झंडियों से किया गया. पंजाब में इस कमीशन का विरोध करते हुए पंजाब केसरी लाला लाजपतराय को पुलिस की लाठियों से घायल होकर शहीद होना पड़ा.

सन् 1928 में पं० मोतीलाल नेहरु की अध्यक्षता में एक कमेटी बनायी गयी इसमें पास हुआ विधान नेहरु रिपोर्ट कहलाया. पाँच मई 1930 को गांधीजी गिरफ्तार कर लिए गये. सत्याग्रहियों पर सरकार ने जुर्माने, कठिन दंड, शारीरिक यातनाएँ और प्रदर्शन कारियों पर गोलियाँ बरसाकर आंदोलन को दबाना चाहा. 30 मार्च 1931 को शाम के सात

बजकर बीस मिनट पर भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को फांसी दे दी गयी, चन्द्रशेखर आजाद जैसे नरसिंह अकेले ही पुलिस से मुकाबला करते इलाहाबाद में वीरगति को प्राप्त हुए, बंगाल में तो पग- पग पर बम के धमाके हो रहे थे, एक के बाद एक गोरे समाप्त किए जा रहे थे, और इन पराक्रमी कार्यों में लड़कियाँ भी शामिल थीं. उन्नीस वर्ष की आयु की शोभारानी दत्त, कुमारी शान्ति घोष, सुमति चौधरी और वीणादास ने जिला मजिस्ट्रेट, यूरोपियन क्लब और स्वयं गवर्नर पर बम और पिस्तौल से बड़ी वीरतापूर्वक प्रहार किया.

पहली गोलमेज परिषद, गांधी इरविन करार, दूसरी गोलमेज परिषद, तीसरी गोलमेज परिषद इस प्रकार बढ़ते हुए 1935 के अप्रैल महीने में प्रान्तिय स्वायत्तता के नवीन कानून का प्रयोग देश में शुरु हुआ. एक सितम्बर 1939 दूसरा विश्व युद्ध प्रारंभ हुआ. जर्मनी के अधीन पोलैण्ड, डेनमार्क, नोर्वे, लक्सेम्बर्ग, हालैण्ड, बेल्जियम, फ्रांस हो गये. अंग्रेजों पर संकट आ पड़ा. इसे सुअवसर समझकर स्वातंत्र्य वीर सावरकर ने देशाभिमानी साहसी युवकों को सेना में प्रवेश करने की सलाह दी. कांग्रेसी नेता कुछ शर्तों पर अपने स्वतंत्र मन से इंग्लैण्ड को सहायता देने के लिए तैयार हो गये. अभी तक अंग्रेजों का घमण्ड उतरा नहीं था. परन्तु यह घमण्ड उतारने का महत् कार्य पंजाब शार्दूल उधमसिंह ने लँदन में ओडवायर का वध कर किया. 1940 में मुस्लिम लीग के नेता जिना में पाकिस्तान की मांग की. 1942 में क्रिप्समहोदय भारत आये. परन्तु यह समझौता भी विफल हो गया क्योंकि गांधीजी ने भी श्री क्रिप्स के प्रस्ताव को " दिवालिया बैंक पर बाद की तारीक लगा हुआ चैक " घोषित किया. इसके बाद 1942 में ही भारत छोडो आंदोलन प्रारंभ हुआ. सभी नेता जेल में बंद कर लिए गये. समाचार मिलते ही सारे देश में तोड़ फोड़ की कार्यवाही शुरु हो गयीं. विचारकों के मतानुसार यह क्रांति 1857 के गदर से भी अधिक भयंकर थी. मार्च 1945 में जब आई० एन० ए० द्वारा जीते गये प्रदेश फिर अंग्रेजों के अधिकार में पहुँच गये और सैन्य शिविरों में निराशा के बादल घनीभूत हो उठे थे तब नेताजी की ललकार सुनाई दी :-

" साथियों ! दुनिया के लिए लड़ाई खत्म हो सकती है लेकिन हमारे लिए नहीं. हमारी लड़ाई तब तक जारी रहेगी जब तक हिन्दुस्तान मुकम्मिल तौर से आजाद नहीं हो जाता. हम आगे बढ़े, दुश्मन के खिलाफ हर सूरत और हर मुकाम पर लड़ना हमारा फर्ज है. आज हमें भगतसिंह बनने की जरुरत है. एक भगतसिंह लाखों की तादाद से बढ़कर काम कर सकता है. " [18]
सुभाषचन्द्र ने आजाद हिन्द फौज की स्थापना जर्मनी में जाकर की परन्तु दुर्भाग्य से इस बहादुर वीर सेनानी की मृत्यु 18 मार्च अगस्त 1945 में हो गयी.

जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरों पर संयुक्त राज्य अमेरिका ने अणुबम फेंके, भीषण नरसंहार हुआ. जापान ने विवश होकर हथियार डाल दिये. जुलाई में मजदूर दल इंग्लैण्ड में सत्ता में आया. 1946 में अन्तर्कालीन सरकार की स्थापना श्री नेहरू के प्रधान मंत्रित्व में जून में हुई जिसे मुस्लिम लीग का भी समर्थन प्राप्त था. फरवरी 1946 में बम्बई में नौसैनिकों का विद्रोह हुआ. तलवार से तलवारें भिड़ी. सात घण्टे लड़ाई चलती रही. फोर्ट विभाग में सात सौ अंग्रेज मारे गये. परिस्थिति बड़ी विकट थी उसपर काबू पाना अति आवश्यक था. इस समय फौलादी सीने से सरदार वल्लभभाई पटेल आगे आये और उन्होंने सैनिकों को शान्त किया. मजदूरों की हड़तालें भी सन् 1946-47 के बीच हुई. उधर काश्मीर और देशी रियासतों में भी जनता आंदोलन अपने चरम उत्कर्ष पर था. इन राजनीतिक परिस्थितियों ने भी स्वतंत्रता के दिन निकट लाने में सहायता की.

3 जून 1947 को लार्ड माउण्ट बेटेन ने समझौते की एक नयी योजना प्रस्तुत की जिसमें भारत के विभाजन और पाकिस्तान को औपनिवेशिक स्वराज्य देने की बात की. दो चार दिनों में यह योजना स्वीकार हो गयी. जिसपर कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने अपनी सहमति दे दी. 15 अगस्त 1947 भारत और पाकिस्तान के रूप में स्वतंत्र हो गया. हमें स्वतंत्रता तो प्राप्त हो गयी परन्तु हमारे दुर्दिन अभी समाप्त नहीं हुए थे. भीषण दंगे

फसाद दोनों देशों में हुए जिनमें हत्या, लूटमार, बलात्कार आदि पाशविक घटनायें हो रही थीं. आबादियों का बदलाव भी एक करुणाजनक वस्तु था, हजारों व्यक्ति बेघर हो गये, धनी दाने-दाने के मोहताज बन गये. अभी पूर्ण शान्ति नहीं हुई थी कि अक्टूबर 1947 को पाकिस्तान ने भारत पर हमला कर दिया. काश्मीर के महाराजा ने काश्मीर राज्य को भारत में सम्मिलित होने की घोषणा की और भारत से सहायता मांगी. भारतीय सैनिकों ने काश्मीर के अधिकांश भाग की रक्षा की. हैदराबाद में भी इसी प्रकार सैनिक हस्तक्षेप करना पड़ा और उसे भी भारत में मिला लिया गया. 26 जनवरी 1950 को भारत एक सार्वभौम जनतंत्र राज्य घोषित किया गया. डा० राजेन्द्र प्रसाद पहले राष्ट्रपति बने. सन् 1950 से 1960 के मध्य सरकार ने अनेक राष्ट्रों के शासनाध्यक्षों { रूस, अमरिका, चीन, इण्डोनेशिया और युगोस्लाविया आदि } ने भारत की यात्रा की और प्रधानमंत्री नेहरू उन देशों में गये. पहले चीन के सम्बन्ध भारत के साथ मैत्रीपूर्ण थे परन्तु चीन की विस्तार वादी नीति के कारण मार्च 1959 में जब तिब्बत के धार्मिक शासक दलाईलामा को आत्म रक्षा हेतु भारत में शरण लेनी पड़ी तो चीन के साथ संबंध बिगड़ने लगे. 20 अक्टूबर सन् 1962 में सीमा विवाद का निर्णय शक्ति से करने के लिए चीन ने भारत पर हमला कर दिया. भारत राजनैतिक और सैनिक दृष्टि से इस असामायिक हमले के लिए तैयार न था. भारतीय वीर होते हुए भी हार गये और अपने माथे पर लगे इस कलंक को सितम्बर 1965 में 21 दिन के भारत पाक युद्ध में धोया ।

इस प्रकार इन राष्ट्रीय आन्दोलनों ने भी वीर काव्य सृजन की प्रेरणाओं में विशेष योगदान दिया. इन आंदोलनों के फलस्वरूप कई रचनायें हुई जो आगे चलकर जनता में नवीन चेतना का संचार कर उन्हें स्वतंत्रता के पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करती रहीं. वीर रस की कवितायें जितनी भी प्रकाश में आयीं वे क्रान्तिकारी आंदोलनों के फलस्वरूप ही. इन आंदोलनों के प्रभाव की चर्चा करते हुए मन्मथनाथ गुप्त ने लिखा है --

" जिस समय वन्दे मातरम कहने पर लोग मारे जाते थे, जब आंदोलन जब स्वप्न था, उस जमाने में इन लोगों ने जो हिम्मत की, कोई अंधा, मूर्ख, कायर भले ही उसे छोटा बताये परन्तु हमारी जाति के मन पर उसका जो असर पड़ा, वह बहुत महत्वपूर्ण है । " [19]

आर्थिक परिस्थिति

उन्नीसवीं शताब्दी में भारतवर्ष के लिए ब्रिटिश राज्य की स्थापना एक आश्चर्यजनक घटना थी, क्योंकि इससे पहले भारतवर्ष कभी भी किसी विदेशी राजनीतिक और आर्थिक खूंटे से नहीं बंधा था. अंग्रेजों से पूर्व आने वाले शासकों के कारण राजनीति में चाहे परिवर्तन हुए हों परन्तु भारतवर्ष की आर्थिक इकाई बराबर बनी रही. भारत में अंग्रेजों के आने से यांत्रिक सभ्यता का आगमन हुआ जो मूलत: पूंजीवाद की देन हैं जिसके फलस्वरूप वर्ग संघर्ष की भावना का उदय हुआ. अंग्रजों की शोषण की भयंकरता और औद्योगिक विकास की आधिपत्य प्रधान नीति ने राजनीति जागृति की लहर दौड़ा दी. भारतीय पूंजीवाद के इस विकास ने ही राष्ट्रीय जागरण की राजनीतिक पृष्टभूमि कायम की.

उद्योगों के विकास, सरकारी कार्यालयों की वृद्धि, शिक्षा के प्रसार तथा निजी एवं वितरणार्थ सेवाओं में वृद्धि ने भारतीय समाज में मध्यम वर्ग की सृष्टि की. धीरे-2 यह मध्यम वर्ग बढ़ता गया और अंत में इसी वर्ग की अधिकता हो गयी. अंग्रेजी शिक्षा देने में अंग्रेजों का अपना स्वार्थ था. अंग्रेजी शासकों को अपने कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए भारतीय अंग्रेजी शिक्षित लोगों की आवश्यकता अनुभव हो रही थी क्योंकि इतने बड़े साम्राज्य में छोटी मोटी नौकरियों के लिए इंगलैण्ड से कर्मचारी लाना बहुत कठिन था. यही वर्ग मध्यम वर्ग बना. देश की गिरती हुई आर्थिक स्थिति के प्रतीक रूप में किसान व मजदूर वर्ग की भांति मध्य वर्ग का भी उतना ही महत्व है निम्न

और मध्य वर्ग दोनों आर्थिक दृष्टि से त्रस्त और पीड़ित रहे, दोनों वर्गों ने राष्ट्रीय आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. पूंजीवादी अर्थरूपी दानव ने अति की स्थिति में आकर मध्य और सर्वहारा वर्ग में विद्रोह की भावना भर दी कि वे समाज व्यवस्था का समूल परिवर्तन चाहने लगे.

रैमतवाड़ी व्यवस्था के द्वारा सरकार और वास्तविक कृषक के मध्यस्थ उपजीवियों की एक विशाल संख्या उत्पन्न हो गयी जिससे किसान दयनीय हो गये और वास्तविक मालिक स्वयं न परिश्रम करने वाले जमींदार हो गये. भारतीय किसान दिन रात जी तोड़ मेहनत करने के बावजूद दिन पर दिन दरिद्र होते गये और ऋण का बोझ उनपर बढ़ता गया.

तत्कालीन आर्थिक स्थिति की दयनीयता का चित्र प्रस्तुत कर विदेशी एवं देशी शासकों के प्रति विद्रोह का संकेत डा० रामगोपाल सिंह चौहान ने किया है. " आर्थिक विषमता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थीं, जिसका स्वाभाविक परिणाम हो रहा था- गरीबी का दिन प्रतिदिन बढ़ते जाना. फलतः किसान, मजदूर और मध्यम वर्ग में अपने आर्थिक वैमनस्य को दूर करने के संघर्ष आरंभ हुए, जिन्होंने बढ़ते- बढ़ते संगठित संघर्षों का रूप ग्रहण कर लिया. जो एक ओर तो विदेशी शासन अंग्रेजी के विरुद्ध था. इस तरह विदेशी दासता से मुक्ति संघर्ष का अंग था और दूसरी ओर अपने देशी शोषकों बड़े जमींदारों और पुजीपतियों के विरुद्ध था. "[20] भारत की आर्थिक अवनति का एक कारण प्राचीन उद्योग धन्धों का विनाश भी है. अंग्रेजी सत्ता के भारत में पूर्णतः स्थापित होने के उपरान्त हमारे उद्योग धन्धों में भी उनकी ओर से तरह-तरह के व्यवधान डाले गये, उतना ही नहीं उन्हें नष्ट कर हमारी सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति में भी रुकावट डाल दी, वस्तुतः अंग्रेजों का मूल मंतव्य भारत को आर्थिक दृष्टि से शिथिल बनाना था. इसके लिए उन्होंने एक ओर देशी उद्योग धंधों का समूल नाश किया और दूसरी ओर विदेशी पूंजी से भारत में नये उद्योग धंधे स्थापित किए. अंग्रेजों की नीति एक ओर भारतीयों को अंग्रेजी शिक्षा तथा सभ्यता की महत्ता से प्रभावित कर दासता की जंजीरों में

जकड़ता था, वहाँ दूसरी ओर व्यापार द्वारा उनकी आर्थिक स्थिति को भी क्षीण बनाता था. अंग्रेजी शासक भारतीयों को पूर्णत: दासता में रखने के लिए दृढ़ संकल्प थे. आर्थिक दृष्टि से तो देश की स्थिति दिनोदिन शोचनीय हो रही थी. ईस्ट इंडिया कंपनी ने प्रारम्भ में तो मात्र व्यापार का बहाना किया और उन्हीं वस्तुओं को इंगलैण्ड में विशेष रूप से पहुँचाया गया, जिनकी आवश्यकता थी. परन्तु लाभ अच्छा होने और अच्छा माल उपलब्ध होने के कारण उनकी तृष्णा और भी प्रबल होती गयी. भारत का कच्चा माल विदेश ले जाया गया और भारतीय कपड़े पर चुंगी अधिक लगायी जाने लगी, विदेशी कपड़ा बिना चुंगी लगे भारत में बिकने लगा. इस प्रकार हमारे कच्चे माल के निर्यात और विदेशी माल के अत्याधिक आयात के कारण उन्हीं को लाभ होने लगा. इससे भारत में धंधे ठप होने लगे और कारीगर लोगों को दो जून पेट भर खाने को भी न मिल पाया, जिससे ये लोग शहर छोड़ गांव की ओर भागने लगे. इस कारण कृषक वर्ग जो पहले ही कठिनाई से जीवन यापन कर रहा था- इनके गांवों में एकाएक बस जाने से अन्न समस्या और भी जटिल हो गयी. मध्यम श्रेणी के भारतीयों के सामने अन्न संकट और बेकारी उत्पन्न हो गयी. इस स्थिति का शिकार पहले बंगाल को ही बनना पड़ा जो कि भारत का अन्न भंडार कहा जाता था. यहां भयंकर अकाल पड़ा जिसमें करीब दो करोड़ व्यक्ति मर गये. एक ओर भारतवासी भूख से मर रहे थे, दूसरी ओर विक्टोरिया कि स्वर्ण जयंती मनाने के लिए सरकार लाखों रुपये पानी की तरह बहा रही थी.

भारत में आर्थिक अवनति का एक और कारण ब्रिटिश सरकार द्वारा भूमिकर में निरंतर वृद्धि थी. सन् 1957-58 में भारत के शासन की बागडोर जब महारानी विक्टोरिया के हाथों में आयी, उस समय देश की कुल मालगुजारी 153 लाख पौण्ड थी जो राधाकमल मुखर्जी के अनुसार 1890-91 में 24 करोड़ रुपये परन्तु 1919 में यह 33 करोड़ रुपये हो गयी । [21] यह धन भारतीयों से लेकर इंगलैण्ड भेज दिया जाता था अगर नहीं तो यहाँ शासन करने वाले शासकों को लम्बे-लम्बे वेतन के रूप में बर्बाद किया जाता था.

भारतवासी चाहे मरे या जियें उनको इससे कोई सरोकार नहीं था. अंग्रेज निरंतर अन्न को बाहर भेजते रहे. यद्यपि देश में नये उद्योग स्थापित हुए परन्तु कारीगर अब मात्र मजदूर और मालिकोंका गुलाम था. मिलों में काम करने वाले श्रमिकों को उनके श्रम के अनुसार वेतन नहीं दिया जाता था. उधर सरकार ने भी इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया जिसके फलस्वरूप जनसाधारण वर्ग की आर्थिक दशा में कुछ सुधार लाया जा सकता. जवाहरलाल नेहरू ने भारत की करुणाजनक स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है कि -

" रिश्वत, धोखा, हिंसा, मारपीट आदि साधन तो उनके साधारण हथियारों में से थे जिनमें अंग्रेज भोले-भाले हिन्दुस्तानियों को अपने चंगुल में फंसाकर उपनर डाके डालते थे । " 22

सामान्य जनता, विशेषकर कृषक वर्ग पर इस स्थिति के कारण प्रभाव पड़ा और उनकी आर्थिक स्थिति दिनोदिन क्षीण होती गयी. इन लोगों को माल गुजारी और जमींदारों के अत्याचारों के कारण अत्याधिक कष्ट सहना पड़ा. प्रथम महायुद्ध के उपरान्त कांग्रेस ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार के द्वारा अंग्रेजी की औद्योगिक नीति तथा आर्थिक शोषण का विरोध किया. इससे साधारण जनता को अधिक लाभ होने की थोड़ी संभावना हो गयी थी कि द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण विश्व व्यापी मंहगायी और बेरोजगारी का शिकार भारत को भी बनना पड़ा. पूंजीवाद की महत्ता स्थापित हो जाने के कारण श्रमिक और कृषक वर्ग दोनों की स्थिति दिन प्रतिदिन बिगड़ती चली गयी. औद्योगिक उन्नति का विकास भी अंग्रेजों द्वारा किया गया पर इससे स्थिति में सुधार कर अंग्रेजों ने लोक कल्याण का कार्य तो किया पर इससे ब्रिटिश व्यापारी कंपनियों का ही लोहे और मशीन आदि के निर्यात से अधिक अर्थ कल्याण हुआ. ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीति से भारत के कई उद्योग धन्धे, हस्तकारी आदि समाप्त प्राय हो गये । " 23

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीयों की आर्थिक स्थिति दयनीय थी जिसका वर्णन कवियों और लेखकों ने अपनी कृतियों में कर जनता का स्वदेश प्रेम और राष्ट्र प्रेम की ओर ध्यान आकर्षित किया और स्वतंत्रता की महत्ता का प्रतिपादन किया. आर्थिक स्थिति में असन्तुलन के कारण लोगों में संयम नहीं रहा क्योंकि " भूखे व्यक्ति से किसी घृणित कार्य की अपेक्षा की जा सकती है. " 24 इन आर्थिक परिस्थितियों ने भारतीय अतीत प्रेम, नेताओं और महान व्यक्तियों का स्मरण करवाया. ब्रिटिश लोगों ने जो व्यापार में लाभ प्राप्त किया जिससे उत्साहित होकर भारत और ब्रिटिश पूंजी ने गठबन्धन करके भारत के शोषण में भाग लेना चाहा. जून 1945 में बिड़ला ने इंग्लैण्ड के नेफील्ड आर्गेनाइजेशन से मिलकर भारत में मोटर कार निर्माण के उद्देश्य से समझौता किया. दिसम्बर 1945 में टाटा ने ब्रिटेन की इम्पीरियल केमिकल इण्डस्ट्रीज से मिलकर रासायनिक उद्योगों के निर्माण के लिए एक दूसरा समझौता किया. 1944=45 में भारतीय पूंजीपतियों ने " भारत के आर्थिक विकास की एक योजना " के नाम से एक योजना देश के सामने प्रस्तुत की जिसके द्वारा वे पन्द्रह वर्षों में भारत के प्रति व्यक्ति की आमदनी को दुगुना कर देना चाहते थे. यह योजना " बम्बई योजना " के नाम से प्रसिद्ध है. 25

सन् 1947 में भारत सदियों की परतंत्रता के बाद स्वतंत्र हुआ. स्वतंत्रता के बाद आर्थिक स्थिति में सुधार आया. कांग्रेस अध्यक्ष सुभाष बसु की राष्ट्रीय योजना समिति §1938§ के कार्य को ही स्वतंत्रता के बाद आगे बढ़ाया गया परन्तु दुर्भाग्यवश जो आर्थिक संकट युद्ध से और प्राकृतिक प्रकोप से हो गया था उसके प्रति ध्यान देना अति आवश्यक हो गया था. सरकार ने देश के नगरों में सरकारी राशन की व्यवस्था शुरू की. सरकार ने स्वयं अन्न को खरीदने और वितरित करने का प्रबन्ध किया. परन्तु यह व्यवस्था भी इमानदारी और नेकनामी पर कायम न रह सकी क्योंकि शासक वर्ग का भ्रष्टाचार और शोषण प्रबल वेग में होने लगा. इस अवस्था को

1950 तक चलाया गया. 1950 के बाद 1965 तक भी आर्थिक व्यवस्था में संतोषजनक सुधार न हुआ. पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा इस स्थिति में सुधार लाने का प्रयत्न किया जा रहा है.

पूर्ववर्ती विवेचन में प्रस्तुत आधुनिक युग के नवजागरण, सांस्कृतिक पुनर्जागरण या पुनरूत्थान, राष्ट्रीय आन्दोलनों एवं क्रान्तिकारियों के अभियान तथा आर्थिक परिस्थितियों के विवेचन से प्रकट है कि इनमें राष्ट्रीय आन्दोलन एवं क्रान्तिकारियों के बलिदान ही प्रधानतया आधुनिक वीर काव्यों की प्रेरणाभूमि का निर्माण करते है. आधुनिक पुनर्जागरण का योगदान आंशिक ही है किंतु सांस्कृतिक पुनर्जागरण ने वीर वृत्ति को भारत की सांस्कृतिक परंपरा तथा इतिहास के गौरवमय पृष्ठों से प्रेरणा देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है. गत गौरव के पृष्ठों से स्वतंत्रता की प्रेरणा ग्रहण करने की वृत्ति निश्चय ही सांस्कृतिक पुनरूत्थान की चेतना की देन है. अतः यह चेतना हिन्दी के वीर काव्यों की उतनी ही महत्वपूर्ण प्रेरणा भूमि से सम्बद्ध है. जैसा कि हम देख चुके हैं कि आर्थिक परिस्थितियों ने हमारे देश में वर्ग संघर्ष की चेतना का संचार किया, अतः इसका योगदान एक प्रकार से सीमित ही है. इस निष्कर्ष के साथ ही यह उल्लेखनीय है कि ये प्रेरणा भूमियाँ प्रधानतया स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व रचित रचनाओं की प्रेरक रही है, यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी ऐसी अनेक रचनाएँ प्रकाश में आती है जो कि राष्ट्रीय आंदोलनों, क्रान्तिकारियों तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण से कहीं अंशतः तो कहीं प्रधानतः प्रभावित रही है.

उपर्युक्त परिस्थितियों के अतिरिक्त स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश को तीन महा युद्धों का सामना करना पड़ा, जिनमें प्रथम दो-अर्थात् चीन का आक्रमण तथा भारत और पाकिस्तान का युद्ध हमारे आलोच्य काल (सन् 1920 ई० से 1965 ई०) में आते हैं. इन युद्धों से हमारी मनीषा ही नहीं जन मानस पर्याप्त मात्रा में उद्वेलित हुआ और

प्रकारान्तर से कवियों ने अनेक ऐतिहासिक महत्व के वीर काव्य लिखे. अतः इन विदेशी आक्रमण की संक्षिप्त चर्चा यहाँ आवश्यक है.

विदेशी आक्रमण तथा राजनीतिक चेतना

पूर्ववर्ती विवेचन से यह स्पष्ट है कि भारत को स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए कितनी ही परिस्थितियों को सामना करना पड़ा. स्वतंत्रता के उपरान्त भी कई समस्यायें हमारे सामने उत्पन्न हुईं, विभाजन से उत्पन्न शरणार्थियों की समस्या सर्वप्रथम सामने आई जिसका सामना भारत ने बड़े ही साहस से किया. खाद्य समस्या, बेरोजगारी की समस्या सभी से जूझना पड़ा. पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा हमने देश की उन्नति करनी प्रारंभ की. इस कार्य के लिए विभिन्न देशों की यात्राएँ हमारे प्रधानमंत्री श्री नेहरू ने की तथा दूसरे देशों के लोगों ने हमारे देश की यात्रा की. इसी बीच देश को एकाएक बाहरी आपत्ति का सामना करना पड़ा. चीन ने 20 अक्टूबर सन् 1962 में सीमा विवाद को लेकर भारत पर अचानक आक्रमण कर दिया जिसके लिए हम तैयार न थे.

अगस्त 1962 में दी गयी चेतावनी में भारत ने चीन को अपना एक प्रतिनिधि दिल्ली भेजने के लिए कहा ताकि लद्दाख भूभाग में तनाव की स्थिति पर विचार किया जा सके परन्तु नये चीन की समाचार एजेन्सी (New China News Agency) ने समाचार दिया के मध्य जुलाई से नयी भारतीय हथियार बन्दसेनाओं ने सीमा पर तनाव की स्थिति बना दी है और यह भी दोष लगाया कि भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल ने दोहरी नीति अपनायी हुई है जो ठीक प्रतीत नहीं होती. [26] इसी समाचार ऐजन्सी ने कहा कि भारतीयों की तरह चीन के लोग भी सीमा विवाद को शान्ति से निपटाना चाहते हैं परन्तु एक दूसरे पर दोषारोपण करते हुए अन्त में 4 सितम्बर को चीन के सैनिकों ने

मैकमोहन ‡Mac Mahon‡ की सीमा को पार किया और अन्त में 20 अक्टूबर में भारतीय क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया. भारतीय सैनिकों पर 20,000 से भी अधिक चीन घुसपैठियों ने जो कि भारी मशीनगने और मध्यमगने लिए हुए थे हमला करके खाउजीमेन ‡Khinzemane‡ की चौकी प्रातः और ढोला ‡Dhola‡ की चौकी शाम को ले ली. चीन के सैनिकों ने, पहली बार भारत के खाद्य वितरण हवाई जहाजों पर पूर्व और पश्चिम में हमला किया. सभी भारतीय हैलीकाप्टर ‡Helicopter‡ मार गिराये गये और दूसरे वितरक जहाज अपने स्थानों पर वापिस आ गये.

21 अक्टूबर को घमासान युद्ध के उपरान्त चीनियों ने सात चौकियाँ ले लीं.[27] अक्टूबर 25 को 24 घंटे के घमासान युद्ध के उपरांत चीन सैनिकों ने तोवांग ‡Towang‡ को जीत लिया. 29 अक्टूबर को सेना के प्रधान जनरल पी० एन० थापर ने अपने सैनिकों को संबोधन कर उनका हौंसला बढ़ाया एवं 23 अक्टूबर को प्रधानमंत्री नेहरू ने भारतीय वीरों को इस भयानक हमले का सामना करने के लिए उत्साहित किया. नेहरू जी ने देखा कि सारा देश एक हो गया है. मजदूरों ने हड़ताल न करने का वायदा किया, कई लोगों ने रक्त, सोना और पैसा रक्षक कोष ‡Defence Fund‡ में दिया. 24 अक्टूबर को चीन अधिकारियों ने सीमा विवाद को वार्तालाप द्वारा निपटाने का फैंसला किया.

समाज या राष्ट्र के जीवन में जब कोई विपत्ति आती है तो वह मानव मन को झकझोर कर नयी गति देती है. हाल के भारतीय सीमाओं पर चीनी आक्रमण और उसके स्थायी वैमनस्य के प्रसंग ने देश को जो चेतना प्रदान की वह अपूर्व है. अभी तक भारतीय विचारधारा चीन के गत वैभव तथा वर्तमान प्रगति पर मुग्ध थी, पारस्परिक मित्रता की आकांक्षी थी और उसकी अकारण कटुता की पहेली पर असमंजस में थी. उक्त प्रचण्ड आक्रमण भारतीयों को अप्रत्याशित और आकस्मिक धक्का जैसा जान पड़ा. अब आत्म रक्षा का विकट प्रश्न उनके सामने उपस्थित हो गया. इस अवसर

पर स्थिति को आंकने और उसके स्पष्टीकरण का कार्य, राष्ट्रीय दृष्टिकोण को जनमत से अवगत कराने तथा देशवासियों को युद्ध में तत्पर रखने का भार समाज के प्रबुद्ध वर्ग के कन्धों पर अनायास आया, जिसके फलस्वरूप राष्ट्र को जाग्रत करने के लिए अनेक रचनायें प्रकाश में आयीं. जनता पहली बार जाग्रत हुई एवं एकता के स्वर में बोल उठी. देश की अखण्डता के लिए हिन्दी काव्य जगत में नये स्वर सुनाई दिये. हिन्दी कवि प्रस्तुत राष्ट्र संकट की स्थिति में कर्तव्य के प्रति जागरूक रहा है, सीमा-विवाद की सूक्ष्म पृष्ठभूमि, युद्धस्थल की तात्कालिक स्थिति तथा चीन के लौह आवरण के पीछे वहाँ की जनता की मनोस्थिति के ज्ञान के अभाव में उसे बहुत कुछ प्रचलित धारणाओं एवं अनुमान के आधार पर कल्पना प्रधान रचनाओं को जन्म देना पड़ा. उसका स्वर स्थिति की मांग और उसकी सीमाओं से आबद्ध था. जीवन के ऐसे मोड़ों पर कलाकार के अन्तराल में जिस भाव - मन्थन और विचार सरणि को जिस क्रमिक विकास और परिपक्वता की अपेक्षा है, उस सबका वहाँ अवकाश न था. इसीलिए इस काव्यधारा में मार्मिकता की अपेक्षा कर्तव्य बोध की बौद्धिक स्थूलता का उभार स्पष्ट है, फलस्वरूप अधिकांश कविताओं का स्वर प्रचारात्मक हो उठा है. कविता विषय प्रधान होने के कारण उसमें कवियों के व्यक्तित्व वैचित्र्य को विभिन्न दिशाओं में विकसित एवं व्यक्त होने का अवसर कम मिला है. [28]

इस आक्रमण के समय रची गयी कविताओं में अत्याधिक गहराई और मार्मिकता है जिस कारण ये कविताएँ भविष्य में भी स्मरण की जायेंगी. चीनी आक्रमण संबंधी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित तथा तीन विशद संग्रहों में संकलित लगभग ढाई सौ से अधिक कविताएँ हैं. इस रचना कार्य में सभी स्तर के कवियों का योगदान है. मैथिलीशरण गुप्त, दिनकर, बच्चन, भट्ट, सुमन जैसे प्रौढ़ कवियों से लकर, अन्य परिचित, नये एवं बिल्कुल नये कवियों तक की रचनायें सामने आयीं. यह काव्य स्रोत नवम्बर 1962 के दूसरे सप्ताह से प्रारम्भ होकर मार्च- अप्रैल 1963 तक वेगमयी धारा के रूप

में परिणत हो गया. जैसे-जैसे युद्ध का आवेग कम हुआ, वैसे- वैसे इसका प्रभाव भी क्षीण होने लगा. यह धारा अगस्त- सितम्बर 1963 के उपरान्त चुक सी गयी ।

इन कविताओं में व्यक्त किया गया है कि हमारा देश निर्माण-कार्य में लीन था, चीनी कुटिलता का हमें संदेह न था और न आशंका ही थी कि चीन एकाएक आक्रमण करेगा. इस काव्य को लेकर चीन की दुष्टता तथा भारत की सदाशयता का कवियों ने विशद वर्णन किया है. राष्ट्र को संभलने और प्रत्याक्रमण की तैयारी के उत्साहवर्द्धक चित्र कवियों ने खींचे हैं. इस प्रसंग में लिखी गयी कवितायें वीर रस से ओत प्रोत हैं. उनमें विषम परिस्थिति की चिन्ता और अवसाद से उद्भूत आक्रोश प्रधान है. पाठकों, श्रोताओं का हौंसला बढ़ाने और उत्साह जगाने के लिए अपने देश के शौर्य कथन एवं दर्पोक्तियों की भरमार है. भारतीयों के विगत पौरुष की पग-पग पर चर्चा है. इनमें अर्जुन, कनिष्क, अशोक, राणा-सांगा, राजपूतों, मरहठों, शिवाजी, गोविन्द सिंह आदि वीरों का विशेष उल्लेख उद्दीपन बनकर आया है. भारत की सभी जातियों, क्षेत्रों, धर्मों के लोगों की अटूट एकता एवं परम लगन का कोष है. घरेलू गद्दारों की प्रताड़ना की गयी है. सत् और असत् के द्वन्द्व को ~~बढ़~~ स्पष्ट और व्यक्त करने के लिए महाभारत और रामायण से चिरपरिचित रूपकों का बारम्बार प्रयोग किया गया है. चीन ने एकाएक आक्रमण करके हमें निंद्रा से जगा दिया. जो होना था वो तो हो ही गया पर अब हमारा हौंसला पस्त नहीं होना चाहिए. यद्यपि हमें हार का कलंक मस्तष्क पर लगाना पड़ा परन्तु अब इस हार से ही जीत की प्रेरणा लेनी चाहिए और कमर बाँध कर युद्ध के लिए तैयार रहना चाहिए. इस समय जितनी कवितायें लिखी गयी उनके संबंध में दिनकर का मत है -

" जनता जब युद्ध से भयभीत होती है तो वह उग्र और उत्साह पैदा

करने वाली कविताओं की माँग करती है. जिस युद्ध से जितना आतंक फैलता है, उस युद्ध के समय उतनी ही अधिक कवितायें लिखी जाती हैं. चीन के आक्रमण से फैलनेवाला आतंक अधिक था, उस युद्ध में उतनी ही कवितायें अधिक लिखी गयीं. पाकिस्तान के आक्रमण से भारतीय जनता में आतंक कम फैला इसलिए उस समय चीन के मुकाबले में कम रचनायें रची गयीं. कहा जाता है कि पाकिस्तानी युद्ध के समय पाकिस्तान में लिखी गयी कवितायें भरमार थी और उस सिलसिले में पाकिस्तान के उन कवियों ने भी अपना ब्रह्मचर्य तोड़ दिया जिनका व्रत था कि युद्ध के समर्थन में वे कभी कुछ नहीं लिखेंगे । " 29

इस समय सारा राष्ट्र एक राष्ट्र पुरुष के रूप में खड़ा हुआ. यह सच है कि उस समय सारे राष्ट्र ने [illegible] जी जान से राष्ट्र की रक्षा के महायज्ञ में आहुतियाँ डाली परन्तु पंजाब की जनता ने दूसरी रक्षा पंक्ति के रूप में और इसके जुझारू सूरमाओं ने नेफा एवं लद्दाख के दुर्गम क्षेत्रों में जिस अप्रतिम शौर्य, विलक्षण साहसिकता और उदात्त देशभक्ति का परिचय दिया, उसका अन्यत्र उदाहरण मिलना कठिन है. परमवीर चक्र विजेता सर्वश्री धनसिंह थापा, जोगिन्दर सिंह, शहीद ब्रिगेडियर होशियार सिंह और सिंह शावक केवल सिंह जैसे शतशः सूरमाओं की कीर्ति कथा भारतीय इतिहास में सर्वदा स्मरणीय रहेगी. पंजाब की इन्हीं विलक्षण सफलताओं को देखकर राष्ट्र नायक जवाहरलाल नेहरू ने कहा था-

" मैं भारत में किसी एक भाग की दूसरे भाग से तुलना करना नहीं चाहता, परन्तु इतना जरूर कहूँगा कि पंजाब और पंजाब वासियों का उदाहरण हम सब भारतीयों के लिए शक्ति और प्रेरणा का स्त्रोत है । " 30

पाकिस्तान का आक्रमण

अभी युद्ध विराम हुए तीन वर्ष ही हुए थे कि पाकिस्तान ने भारत पर एक सितम्बर 1965 में आक्रमण कर दिया. यह आक्रमण एक सुचारू ढंग

से सोची हुई योजना द्वारा हुआ. 9 अगस्त को जम्मू के प्रधान श्री जी० एम० सादिक ने श्रीनगर में कहा कि कुछ दिनों से पाकिस्तानियों ने जम्मू और काश्मीर के कुछ भागों में अमानुष आक्रमण किए हैं. अपने भाषण में उन्होंने ये भी कहा कि सशस्त्र पाकिस्तानी व्यक्ति भारतीय भूभाग में प्रवेश करते हैं और वे अपने आप को मुजाहिब (Mujahibs) कहते हैं. इनके पास मशीनगनें एवं अन्य सैनिक हथियार मोर्टार (Mortars) हैं और वे जहाँ भी जाते हैं वही आतंक फैलाते हैं. [37]

पाकिस्तान के विदेशमंत्री जुलफीकार अली भुट्टो ने रावलपिंडी में 12 अगस्त को अपने भाषण में भारतीयों को ही दोषी ठहराया और कहा कि भारत पाकिस्तान को धमकाना चाहता है परन्तु भारत जानता है कि पाकिस्तान अकेला नहीं है उसके साथ संसार के स्वतंत्रता प्रेमी देश आफ्रीका और एशिया के देश हैं, भारत में ही बहुत से लोग हैं जो पाकिस्तान के साथ सहानुभूति एवं उनका पक्ष लेते हैं. उसने कहा कि पाकिस्तान जनमत के लिए कुछ भी नहीं करना चाहता परन्तु जम्मू और कश्मीर के लोगों के साथ उनकी सहानुभूति है. [32] देश के नाम संदेश में प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने पाकिस्तानियों को चेतावनी देते हुए कहा कि -

" भारत किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं करेगा और सेना सेना का मुकाब्ला करेगी. " [33]

14 अगस्त को 1000 पाकिस्तानियों ने सीमा को पार करना चाहा, अगस्त 16 को पाकिस्तान ने 8000 से 12000 शिक्षित व्यक्तियों को जम्मू और काश्मीर को गुरिल्ला युद्ध के लिए भेजा और 300 पाकिस्तानियों ने पुलिस चौकी पर हमला किया. पाकिस्तान में गये भारतीय हाई कमीशनर सरदार केवल सिंह ने पाकिस्तान के विदेश मंत्री को 10 अगस्त भेंट करके वार्तालाप में कहा कि पाकिस्तान तुरन्त सशस्त्र सैनिकों को जम्मू-काश्मीर में प्रवेश रोक दें नहीं तो इसका नतीजा बुरा होगा. काश्मीर की स्थिति

के बारे में UN के सेक्रेटरी जनरल यू० थांट ‡ U. Thant ‡ से अवगत कराया गया परन्तु पाकिस्तान ने अपना रवैया न बदला और खुले रूप में युद्ध की घोषणा कर दी. सर्वप्रथम स्कार्डन लीडर ‡ Squadron Leader ‡ ट्रेवर कीलर ने जहाज गिराया और वीर चक्र प्राप्त किया. 4 सितम्बर को दो और पाकिस्तानी F 86 गिराये गये. 5 सितम्बर को पाकिस्तान ने काश्मीर के झगड़े को भारत के साथ खुले युद्ध के रूप में प्रारंभ किया और अपना सैबर जेट जहाज भारतीय भूभाग में भेजकर भारतीय हवाई सेना पर अमृतसर के निकट आक्रमण किया. 6 सितम्बर को अमृतसर, फिरोजपुर और गुरदासपुर में पाकिस्तान ने पैराशूट से व्यक्तियों को अम्बाला, पठानकोट और पटियाला में उतारे जिनमें से 21 पकड़े गये और 5 जालंधर और लुधियाने में मारे गये. 7 सितम्बर को सबसे ज्यादा हवाई हमले हुए. पाकिस्तानी हवाबाजों ने पठानकोट, अमृतसर, फिरोजपुर, जालंधर, जम्मू और श्रीनगर पर हमले किये और भारतीयों ने ‡ Chaklala ‡ चकलाला रावलपिंडी के निकट एवं लाहौर के निकट सरगोधा पर बम गिराये. इसी दिन स्यालकोट क्षेत्र में बढ़ने से रोकने के लिए पाकिस्तान ने गुरदासपुर एवं डेराबाबा नानक के पुलों को उड़ाया. 9 सितम्बर को भारतीय हवाई सेना ने 75 पाकिस्तानी टैंकों को लाहौर, स्यालकोट और कसूर क्षेत्र में नष्ट किया. इसी दिन पांच पाकिस्तानी चौकियों पर भारतीयों ने अधिकार कर 150 जवानों एवं दो आफीसरों को पकडा इसके साथ ही सिंध और स्यालकोट सैक्टरों को खोल दिया.

11 सितम्बर को लाहौर क्षेत्र में पाकिस्तान की सशस्त्र सैनिक टुकड़ी को नष्ट किया गया और पाकिस्तानी जवानों को कैद किया. 15 सितम्बर को पेशावर की रेलवे लाईन को तोड़ दिया. निगोरिया के प्रधान यू.थांट इत्यादि लोगों ने युद्ध विराम के लिए अयूब खां और शास्त्री जी को कहा परन्तु अयूब खां ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया. 22 सितम्बर को जनरल यू० थांट के सहयोग से युद्ध विराम हो गया. [34]

पाकिस्तान के युद्ध के दौरान पंजाब की धरती ही युद्ध का मैदान बनी, इसीलिए इस युद्ध में अन्य प्रदेशों की अपेक्षा पंजाब का योगदान भी स्तुत्य रहा. देश के दूसरे विभिन्न भागों ने भी यथासंभव अपना योगदान किया और देश की स्वतंत्रता को बचाने के लिए एक सूत्र में बंध गये. भारत पाक संघर्ष में देश की जनता और जवानों ने अपने लहू से देश के इतिहास का गौरवशाली अध्याय लिखा. जैसे ही उस पार के पड़ोसी ने अंतरराष्ट्रीय सीमा का उलंघन करके भारत पर खुला आक्रमण किया. वारमेड़ से लेकर हाजीपीर तक के समरांगणों में शत्रु के प्रत्येक प्रहार की चोट उन लोगों ने अपने वक्ष पर झेली. सैवर संहारक नैट चालकों और वीर सैनिकों की शौर्य गाथाएँ हर घर में दोहराई जाने लगीं. शत्रु के हवाई आक्रमण और छाता सैनिकों की धर पकड़ यहाँ के लोगों के लिए विनोद का साधन बन गयी. संघर्ष में पंजाब का हर गांव एक दुर्ग और हर व्यक्ति एक सिपाही के रूप में जुट गया. इस प्रदेश की वीर प्रसू माताएँ अच्छे से अच्छा भोजन पकाकर और दूध,लस्सी की मटकियाँ सिर पर उठाये बमों और तोपों के गोलों के धमाकों एवं गोलियों की धारासार बौछारों में भी अंतिम मोर्चे तक सीमान्त की रक्षा कर रहे जवानों को भोजन पहुँचाने और दूध पिलाने का कार्य करती रहीं. लोगों में जवानों के स्वागत सत्कार की होड़ लग गयी. ड्राईवर, मकैनिक, रिक्शा चालाक, विद्यार्थी आदि सभी देश रक्षा के महायज्ञ में बिना भय से इस प्रकार जुट पड़े मानों यह उनका दैनिक कृत्य हो. पंजाब के इस अप्रिम साहस, समर्पित कर्तव्य परायणता और उद्दाम देशभक्ति को देखकर यशस्वी सेनापति जयन्तनाथ चौधरी ने कहा था कि -

" पंजाब के लोगों ने जिस कार्य क्षमता का परिचय दिया उसने स्टालिन ग्राड के समरांगण में प्रदर्शित रूसियों की यशोगाथा को भी धूमिल कर दिया है. " [35]

युद्ध के दौरान लाल बहादुर शास्त्री ने कहा था - " हमारे मन में अपने देश की हिफाजत की बात है, लेकिन न्याय के साथ, इन्साफ के साथ हम सचाई से न्याय करना चाहते हैं. हमें बड़े धीरज और शान्ति के साथ, अभिमान से नहीं, काम लेना है. हम शान्ति बनाये रखते हुए भी इस बात का मन में पक्का इरादा रखेंगे कि हमारे देश पर कोई संकट आए तो हम सब मिलकर एक आवाज से बोलें, एक साथ खड़े हों. फिर हम जानते हैं कि हमारे देश का कोई बाल भी बाँका नहीं हो सकता । " [36]

" इतिहास में कुछ नया योगदान हर महान कवि और द्रष्टा ने दिया है. इन महान साहित्यकारों के माध्यम से आनेवाला अनास्था या कठिन नैराश्य का स्वर या मनुष्य के विकारों का निर्भय साहसी चित्रण भी उसी प्रकार का एक योगदान है, भले ऊपर से देखने पर वह कुछ अलग सा लगे । " [37]

साहित्यकार प्रकृत्या जीवनधर्मी होता है, मानवधर्मी होता है, शान्तिकामी होता है. उच्चतर जीवन- मूल्यों की सृष्टि के लिए यही उसकी आंतरिक मांग होती है. वह अशांत वातावरण में काम भी नहीं कर सकता क्योंकि उसे यों ही अपने भीतर की अत्याधिक अशांति झेलनी पड़ती है, अपने सर्जक मन की अशान्ति. शांत परिवेश में बैठकर वह अपने से जूझना चाहता है. यही उसका स्वभाव है. लेकिन जब ऐसा कोई संकट सामने आ जाता है, तो साहित्यकार भी अपनी शान्ति का पल्ला पकड़ कर अलग नहीं बैठा रह सकता. आज का युद्ध पहले की तरह का युद्ध नहीं है. आज का युद्ध समग्र युद्ध है जिसमें औरत-मर्द, युवा-वृद्ध-बालक, सैनिक-असैनिक सब समान रूप से अपने-2 सामर्थ्य के अनुसार हिस्सा लेते है. संपूर्ण राष्ट्र के मनोबल की अग्नि-परीक्षा होती है जो अंततः देश की अर्थनीति, समाज नीति, राजनीति और संस्कृति की ही अग्नि परीक्षा होती है.

युद्ध के दौरान एक गंभीर वातावरण उपस्थित हो जाता है और

साहित्यकार को एक साहित्यकार और बुद्धिजीवी के नाते अपना कर्तव्य और भूमिका समझनी चाहिए. " वर्तमान युद्ध-संकट और साहित्यकार का दायित्व " नामक लेख में श्री अमृतराय कहते हैं -

" हमने पाकिस्तान पर (या दूसरे किसी देश पर) विस्तारवादी युद्ध किया होता तो स्थिति बिल्कुल दूसरी होती. ऐसे युद्ध में सहयोग करना अन्याय के साथ सहयोग करना होता. इतना ही नहीं, वैसे युद्ध में हमारे नैतिक बोध की मांग होती है कि हम उसका विरोध करें, भले इसके लिए हमें कुछ भी कीमत चुकानी पड़े- उसी तरह जैसे सार्त्र ने और कामू ने अल्जीरिया को परतंत्र बनाये रखने के लिए फ्रांस के उपनिवेशवादी युद्ध का विरोध किया. या कि जैसे आना ज़ेगर्स और आर्नल्ड ज़्वाइग जैसे जर्मन लेखकों ने हिटलर के विस्तारवादी साम्राज्यवादी युद्ध का विरोध किया. लेकिन हमारे यहाँ स्थिति बिल्कुल उलटी है. हमने पाकिस्तान पर हमला नहीं किया, पाकिस्तान ने हमारे ऊपर हमला किया और हम अपनी देश रक्षा के लिए, अपनी प्रादेशिक अखंडता और अपनी स्वाधीनता के लिए लड़ रहे हैं. काश्मीर के सवाल पर, जिसका बहाना बनाकर पाकिस्तान ने हमारे ऊपर यह हमला किया, हमारी स्थिति दुनिया के सामने बिल्कुल साफ है, और जो कुछ धुंध रही भी होगी वह पिछले डेढ़ महीने के इस अत्यन्त अशांत और उपद्रवी तत्वों के लिए अत्यन्त सुविधाजनक समय में भी काश्मीरियों के सहज भारतप्रेम, पाकिस्तान विरोधी आचरण से स्पष्ट हो गयी. [38]

इस युद्ध ने हमारे में नैतिक बल, साहस, शक्ति, मानवता, देशप्रेम उत्सर्ग की प्रवृत्ति, देश प्रति कर्तव्य ने ही हमारे नैतिक पक्ष को प्रबलता प्रदान कि जो पाकिस्तान के बर्बर आततायियों के विरुद्ध हमें वह अतिरिक्त नैतिक शक्ति दे सकी जो उनके हथियारों पर भारी पड़ी. सच्चे अर्थों में देश रक्षा का हमारा यह संग्राम अंधार की शक्तियों के विरुद्ध एक

न्याय युद्ध था जिसमें हम अपनी जीवन प्रणाली की रक्षा के साथ-साथ अपने जीवन मूल्यों की भी रक्षा करने में सफल हुए. इस युद्ध में रणजीत सिंह दयाल,हवलदार अब्दुल हमीद, लेफ्टिनेन्ट कर्नल ए० वी० तारापोर, मेजर मुहम्मद अलीरजा शेख, मेजर आशाराम त्यागी इत्यादि ने अपना शौर्य दिखाया तथा देशभक्ति और कर्तव्य का नाम ऊँचा किया. छम्ब जोरिया के युद्ध में भारतीय हवाबाजों ने भी अपना कमाल दिखाकर सेना की मदद की. हमारे छोटे नैट विमानों ने दुश्मनों के दांत खट्टे कर दिये. शत्रु को पता लग गया कि केवल मांगे हुए हथियारों से युद्ध नहीं जीता जा सकता उसके लिए साहस की आवश्यकता है. चीन के युद्ध के दौरान लिखी महाकवि दिनकर की " परशुराम की प्रतीक्षा " में हमारी वीरता को जो वाणी मिली वह भारतीय के लिए गर्व की वस्तु है नहीं है ? भारत पाक संघर्ष के समय मलखान सिंह सिसोदिया द्वारा लिखा गया " सूली और शान्ति " काव्य भी प्रेरणा प्रदान करने वाला है. इन दोनों आक्रमणों ने एक ओर हमें अतीत गौरव का परिचय दिया तो दूसरी ओर वर्तमान स्वतंत्र भारत की स्वतंत्रता की रक्षा की प्रेरणा प्रदान की. इस युद्धों ने स्वतंत्रता के बाद वीर रस की परम्परा को आगे बढ़ाया.

इस युद्ध के उपरान्त भी भारत पर एक और युद्ध थोपा गया वह था भारत पाक का 1972 का युद्ध. इस युद्ध में हमारे देश की बागडोर श्रीमति इंदिरा गांधी के सबल हाथों में थी. उन्होंने अपने साहस एवं शौर्य का परिचय बांगला देश को बर्बर पाकिस्तान के हाथों से मुक्ति दिलाकर दिया है. वास्तव में भारतीयों के लिए गौरव की वस्तु हैं. बांगला देश से हजारों की संख्या में शरणार्थी सीमा रेखा पार कर भारत में दाखिल हो गये. मुक्तिवाहिनी ने देश के भीतरी भागों में अपने संघर्ष को जारी रखा. पश्चिमी पाकिस्तान ने बंगालियों को दबाने के साथ-2 भारत पर भी हमला कर दिया. सबसे पहले पाकिस्तानी बमवर्षकों ने भारत के हवाई अड्डों अमृतसर, आगरा आदि स्थानों पर बम वर्षा कर

युद्ध की पहल की. देश की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए भारतीयों को भी युद्ध करना पड़ा. बांगला देश को विजय करने में जरनल अरोड़ा ने जो साहस, शौर्य दिखाया वह भारत के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से लिखा रहेगा. भारतीय नौ सैनिकों ने पाकिस्तान की प्रसिद्ध पनडुब्बी गाजी को डुबा दिया और सैनिकों की मदद की. हवाबाजों ने भी युद्ध में अपना पूरा सहयोग देकर पाकिस्तानियों के टैंकों, हवाई अड्डों, रेडारों को नष्ट किया और सेना को आगे बढ़ने में मदद की. एक बार फिर से देश एक होकर मुकाबले के लिए खड़ा हो गया. एकबार फिर अमेरिका के हथियार भारतीय जवानों के सम्मुख बेकार सिद्ध हुए. सारे देश में जासूसों की धरपकड़ शुरु हो गयी. हर सैनिक, असैनिक ने अपना पूर्ण हिस्सा डाला और एक बार फिर देश की स्वतंत्रता बचाने में सैनिकों की मदद की. इस समय भी कवियों ने देशभक्ति, ओज जगानेवाली कवितायें लिखी परन्तु ये सभी रचनायें बहुत मौसमी रहीं. दिनकर, माखनलाल चतुर्वेदी, नवीन आदि कवियों द्वारा लिखे गीत प्रेरणाप्रद और सशक्त हैं. इस समय लिखी गयी वीर रस की रचनाओं से जहाँ एक ओर देश में एकता की भावना दृढ़ हुई वहाँ सैनिकों के मोर्चे भी मजबूत हुए. युद्ध विराम ने हमारे सैनिकों के वीरता प्रदर्शन में कुछ कमी अवश्य कर दी फिर भी वे भविष्य की तैयारियों में जुट गये. सैनिकों के लिए ये रचनाएँ लाभप्रद रहीं. इसलिए कि इन रचनाओं में एक ओर हमारे अतीत गौरव का परिचय है तो दूसरी ओर हमें वर्तमान स्वतंत्र भारत की स्वतंत्रता की रक्षा की प्रेरणा भी मिलती है, एक ओर हमें अपने देश की गरिमामयी पुरातन प्रकृति के सौन्दर्य और उसके आधारभूत पर्वत,नदी- निर्झर, समुद्र शस्य श्यामल भूमि के विस्तार के आनन्दप्रद वर्णन पढ़ने को मिलते हैं तो दूसरी ओर वैज्ञानिक प्रगति के परिचायक भाखरा नंगल, हीराकुण्ड जैसी उपलब्धियों पर गर्व होता है. उसके साथ ही शत्रुओं की क्षुद्रता और कूटनीति का भी ज्ञान होता है कि वे हमारे साथ ही स्वतंत्र होने पर भी हमारे सदृश प्रगति न कर पाने पर ईर्ष्या से कैसे जल उठे हैं और कैसे उस जलन से मनुष्यता की सामान्य भूमि से भी नीचे आ गये हैं. हम यह कह सकते हैं कि वीर रस की रचनाओं ने हमारे देश की रक्षा में प्रशंसनीय योग दिया है.

निष्कर्ष

निष्कर्षत: हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक वीर काव्यों के सृजन में मुख्यत: सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं राष्ट्रीय आन्दोलनों ने योगदान दिया. उन्नीसवीं शताब्दी का जन-जीवन नाना प्रकार के अन्ध विश्वासों, रूढ़ियों, आडम्बरों, शुष्क कर्मकाण्ड तथा भ्रान्त विचारों के मोह जाल में फँसा हुआ था. उस समय नवीन दृष्टिकोण ने उनकी आँखें खोल दीं. पराधीनता की पीड़ा अनुभव करने पर विद्वान भारतीयों ने देश की दुरवस्था देखी. उन्हें इसमें संशोधन की आवश्यकता प्रतीत हुई. उसीके परिणामस्वरूप उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रह्मसमाज, आर्य समाज, रामकृष्ण समाज, थियोसाफिकल सोसायटी आदि विभिन्न धार्मिक आन्दोलनों का जन्म हुआ. आधुनिक भारत में नवयुग की अवतारणा इन धार्मिक आन्दोलनों द्वारा प्रकट होती है. इससे भारत को प्राचीन गौरव का ज्ञान, वर्तमान अधोगति तथा भविष्य में विश्वास उत्पन्न हुआ. अंध विश्वासों और कुरीतियों के स्थान पर बुद्धिवाद और तर्क को प्रमुखता मिली.

आधुनिक युग के सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रत्यक्ष रूप से योग वीर काव्यों के सृजन के लिए आंशिक रूप में ही कहा जा सकता है किन्तु सांस्कृतिक पुनर्जागरण ने वीर वृत्ति को भारत की सांस्कृतिक परम्परा तथा इतिहास के गौरवमयी पृष्ठों से प्रेरणा देने का महत्वपूर्ण कार्य किया. अत: यह चेतना हिन्दी के वीर काव्यों की उतनी ही महत्वपूर्ण प्रेरणा भूमि से संबंधित है. राष्ट्रीय आन्दोलनों के रूप में क्रान्तिकारियों के प्रयासों ने भी लोगों में उत्साह जगा कर विदेशी शक्ति से जूझने के लिए देश को तैयार किया तो आर्थिक परिस्थितियों ने वर्ग संघर्ष की चेतना को जन्म दिया.

उपर्युक्त प्रेरणाओं के अतिरिक्त भारत पर हुए दोनों विदेशी आक्रमणों ने भी सोयी हुई चेतना को जगाकर भारतीयों को स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तैयार किया और इसके फलस्वरूप स्वतंत्रता के उपरान्त वीर काव्यों की जो धारा चुक सी गयी थी फिर से प्रवाहित हो गयी.

संदर्भ सूची

1. शिवनंदनप्रसाद : हिन्दी साहित्य एक परिवृत, पृ. 248-49.
2. रामधारी सिंह " दिनकर " शुद्ध कविता की खोज, पृ. 169.
3. श्री कृष्ण सरल, सरदार भगतसिंह, पृ. 162.
4. Heroic a chievements, agonics heroically rndured,there are the subtime food by which the spirit of national hood in nourished '

   - Ramsay Muir : Nationalism and Internationalism,P.43

5. शब्दार्थ दशम् ग्रंथ साहित्य (पोथी पहली) भाई रणधीर सिंह संपादक डा० तारासिंह, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला 1973, पृ.127 उद्धृत अथचण्डी चरित उक्ति विलास (भाग प्रथम) पृ. 233.
6. सियारामशरण गुप्त, मौर्य विजय (भूमिका) पृ. 34.
7. संस्कृति के चार अध्याय, दिनकर, पृ. 541.
8. He was a man of profound lerning ... an eminent patriot, .. an ardent social reformer ..., a religious reformer and a saihtin private life.

   - G. Paramas -Warn Pillai : Representative Indians,sp.81

9. आधुनिक काव्यधारा का सांस्कृतिक स्त्रोत, केसरी नारायण शुक्ल, पृ. 51.
10. कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है -- प्रजा पर पिता, माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है.

   - दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, अष्टम समुल्लास,पृ.195

11. विवेकानन्द चरित, सत्येन्द्र मजूमदार, अनुवादक पंडित मोहनी मोहन गोस्वामी, द्वितीय संस्करण- 1951, पृ. 192

12 वही, पृ. 261

13. डा० नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 446

14. गुप्त, भारत-भारती, पृ. 140

15. कांग्रेस का इतिहास, पृ. 3

16. धर्मयुग, 2 जनवरी, 1977, पृ. 24

17. वही, पृ. 25.

× 18. श्री कृष्ण सरल, सरदार भगतसिंह, पृ. 148. ×

18. श्री कृष्ण सरल, सरदार भगतसिंह (विस्फोट) पृ. 22.

19. मन्मथनाथ गुप्त, भारतीय क्रांतिवादी आंदोलन का इतिहास, 1960, पृ. 51.

20. डा० रामगोपाल सिंह चौहान, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ. 7.

21. कृष्ण बिहारी मिश्र, आधुनिक सामाजिक आंदोलन और हिन्दी साहित्य, पृ. 79.

22. Jawaherlal Nehru: The Discovery Of India : p.275.

पृ. 275.

23. डा० विनय मोहन शर्मा, हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास, पृ. 17.

24. " बुभुक्षिता किं न करोति पापम् " (पंचतन्त्र)

25. कृष्ण बिहारी मिश्र, आधुनिक सामाजिक आंदोलन और आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ. 228.

26. It accured the Indian Government and the Indian Premir Mr. J.~~NNe~~ Nehru of following "a double policy " and using his expressed desire for a peaceful settlement as "nothing else than a cover for their real agression". Asian Recorda Wakly digat : editor M. Herry Samual :

:Oct. 1962 : vol. 3 No. 40 p. 4514

27. The New China News Agency listed the posts as Jungputa, Chekuppu, Keningnai, Jihtingpu, Tang, & Niangpa and the Drokung Bridge.

- Asian ~~Recorder~~ Recorda. : Excutive Editor M.Henry Samual . Vol. 26 - December 2, 1962 VolVIII No.48 p. no. 49089.

28. साहित्य संदेश, अंक-7, 8 जनवरी-फरवरी 1964, भाग-25, पृ.324.

29. रामधारी सिंह दिनकर, शुद्ध कविता की खोज, पृ. 227.

30. शंखनाद, लोक संपर्क विभाग, पंजाब, पृ. 10

31. Asian Recorda weekly Right : Sep. 10-16,1965.Vol.XI no.37.
10-16, 1965, वाल्यूम- 11, नं. 37.

32. It would be a tragic coumteroction if India seeks to threaten Pakistan. She must know, however the Pakistan does not stand alone. Pakistan has the support of freedom loving poeple throught out the world, the concience of mankind and of the Asian Countries. Indeed, in India herself there will be people who will support and sympathize with Pakistan. He claimed that Pakistan had nothing to do with 'uprising' although sympathized with the people of Jammu and Kashmir.

33. In broadcast to the nation on August 12, the Prime Ministe Mr. Lal Bahadur Shastri, warned Pakistan that aggrission

agaimmst India would never be ~~ddd~~ allowed to succeed and there would be not with force.

- Asian Recorda : Sep. 10 to 16, 1965. Vol.XIno.37 p. 6652

34. Asian Recorda oct. 8-14, वाल्यूम- 41, पृ. 6705

35. शंखनाद, लोक संपर्क विभाग, पंजाब, पृ. 10

36. वही , ॥प्रस्तावना॥

37. माध्यम- वर्ष-2, अंक-6, अक्टूबर 1965, पृ.-4 ॥ वर्तमान युद्ध संकट या साहित्यकार का दायित्व॥

38. वही, पृ. 5